अंक-7, मार्च, 2025

पर्यावरण संवाद

प्रकृति एवं देशज संस्कृति के संरक्षण और संवर्द्धन के लिए

देशज खेती : झारखंडी संस्थाओं की पहल

गंगा को अविरल बहने दो

गंगा मुक्ति आंदोलन के 43वें वर्षगांठ का संकल्प

- ललन

गंगा मुक्ति आंदोलन के 43वें वर्षगांठ पर 22-23 फरवरी 2025 को दो दिवसीय राष्ट्रीय समागम का आयोजन कहलगांव, भागलपुर में संपन्न हुआ। आंदोलन का विहंगम पुनरावलोकन का अवसर था और देश के कई राज्यों से महत्वपूर्ण प्रतिनिधि मौजूद रहे। गांधी जयप्रकाश के अहिंसात्मक प्रयोगों से आगे की कड़ी में बोधगया भूमि मुक्ति आंदोलन और गंगा मुक्ति आंदोलन को विशेष रूप में जाना जाता है।

22 फरवरी को आंदोलन की जीत का दिवस मनाया जाता है। दिन भर देश भर के आंदोलनकारी मित्रों की आमद, विचार विमर्श संस्मरण समीक्षा और ढलते सूर्य के निगहबानी में गंगा की लहरों पे नौका दौड़ में आनंद और उत्साह। धुंधलका छाते ही मछुआ औरतें, कन्याएं, बच्चे बड़ी थालों तथा टोकरियों में जतन से सजाए मिट्टी के दीए लेकर गंगा तट को प्रकाश से भर देती हैं। नावों पर चढ़कर बीच प्रवाह में दिए गंगा के अंचल में बिखेर दिए जाते हैं।

22 फरवरी को 10 बजे से काली घाट पर विशाल पीपल वृक्ष के नीचे बिहार, बंगाल, झारखंड, दिल्ली से आए आंदोलन मित्र स्थानीय मछुआ समुदाय के साथ बैठे। बुजुर्ग परसादी सहनी ने आंदोलन का इतिहास दोहराया और योगेंद्र सहनी ने मौजूदा चुनौतियों को सामने रखा।

जलकर जमींदार महाशय महेश घोष और मुशर्रफ हुसैन परमानिक के कारिंदों, लठैतों से संत्रस्त कागजी टोला के मछुआ स्त्री पुरुषों ने 1980 के दशक में ही अपने तरीके से आवाज उठाना प्रारंभ कर दिया था। 1982 में उन्हें छात्र युवा संघर्ष वाहिनी का सक्रिय सहयोग मिला तो आंदोलन रूप लेता गया। अनपढ़ मछुआ स्त्रियों ने भी अगुआई सम्हाली।

इस वर्षगांठ में जो प्रबल भावना उभर कर आई वह यह थी कि गांधी, लोहिया जयप्रकाश के साथ अम्बेडकर, भगत सिंह, सिद्धू - कान्हू, बिरसा मुंडा और तिलका मांझी के संघर्षों से वैचारिक सूत्र को और ज्यादा संजीदगी से समाज में ले जाने की जरूरत है।

सुखद संयोग यह रहा कि पर्यावरण आंदोलन के महत्वपूर्ण साथी घनश्याम की पुस्तक सीरीज "हुलगुलान के शहीद" की पहली प्रस्तुति "आदि विद्रोही शहीद तिलका मांझी" का लोकार्पण इस समागम में हुआ। तिलका मांझी ने तो कहा था कि धरती सिंगबोंगा की है, इस पर कोई ख़ज़ाना कैसे वसूल सकता है।

दूसरे दिन का कार्यक्रम एक अध्यक्ष मंडल के निर्देशन में चला जिसमें योगेंद्र सहनी, घनश्याम, कुमार चंद्र मार्डी, रूपेश कुमार, कपिलेश्वर राम, दिनेश सिंह, महेन्द्र यादव थे। संचालन उमेश तुरी कर रहे थे। जनता की ओर से वैकल्पिक जलकर नीति एक ड्राफ्ट बिल भी व्यापक चर्चा के बाद पास किया गया। इसके लिए जून 2025 में पटना में एक कार्यशाला आयोजन तथा विभिन्न राजनैतिक दलों को शामिल करते हुए "प्राइवेट बिल" के तौर पर बिहार विधान मंडल से पारित कराया जाएगा। केंद्र सरकार से फरक्का बराज पर श्वेतपत्र जारी करने की मांग की गई। यह भी निर्णय लिया गया कि बिहार, बंगाल, झारखंड के नदी कर्मियों का संयुक्त संगठन सक्रिय किया जाएगा जिसमें कोशी नवनिर्माण मंच, गंगा मुक्ति आंदोलन, ऑर्गेनाइजेशन फॉर स्मॉल फिशरमैन फॉक, गंगा भांगन नागरिक प्रतिवाद समिति आदि अग्रिम भूमिका लेंगे। ■

विषय क्रम

संपादक
घनश्याम

संपादक मंडल
उदय
अबरार ताबिन्दा
पूनम रंजन
सीमांत सुधाकर
महेश मिश्रा
तहा सैफुद्दीन
सालगे मार्डी
कोर्दुला कुजुर
ऐनी टुडू
श्रावणी
शशि बारला

संवाद सूत्र
मालती कुमारी
अश्विनी महाराणा
संजय समीर एक्का
आनंद मरांडी
कुंदन कुमार भगत
सीमा
सुशीला हेम्ब्रम
मिनीला बास्की

कला संपादक
शेखर

साज-सज्जा
जमील, राकेश व जावेद

संपादन कार्यालय
पर्यावरण कक्ष "संवाद" 52 बीघा,
मधुपुर, झारखंड
की ओर से प्रकाशित
मुख्य कार्यालय
'संवाद', 104/A उर्मिला इन्क्लेव,
पीस रोड, राँची - 834001
www.samvad.net

घनश्याम द्वारा संपादित एवं प्रकाशित तथा
आई.डी.पब्लिशिंग, राँची द्वारा मुद्रित
सीमित प्रसार

- **चिंता - सह चिंतन**
  देशज खाद्यान्नों से ही भूखमुक्त बनेगा झारखंड - **जेम्स हेरंज** 5

  सुरक्षित आहार, सुखी संसार - **राजेश झा** 7

- **खेती - किसानी**
  बदलते परिवेश में जैविक खेती की भूमिका - **'प्रवाह' टीम** 10

- **प्रयोग - दर - प्रयोग**
  टिकाऊ कृषि विकास और जल संरक्षण : एनबीजेके के बढ़ते कदम 14

- **जल - पहल**
  जल से ही सुरक्षित है हमारा वर्तमान और भविष्य - **इन्द्रमणि साहू** 16

- **गवेषणा**
  प्राकृतिक खेती : जैव विविधता की समृद्धि का प्रयोग - **कृष्ण कान्त** 18

- **साझा अभ्यास**
  प्रवासी मजदूर से एक आत्मनिर्भर किसान बनने तक का सफ़र - **मुकेश/सीमांत** 21

- **विचार**
  नैसर्गिक खेती : जलवायु संकट का एक समाधान - **घनश्याम** 22

जलवायु संकट के बीच बहस में संस्थाओं का प्रयोग

आज जलवायु संकट ने पूरी दुनिया को धर दबोचा है। इस संकट की मार, अपने देश में सबसे ज्यादा, किसानों और मजदूरों को झेलनी पड़ रही है। रासायनिक खेती ने तबाही मचा रखी है और कथित आधुनिक खेती ने जमीन को नशेबाज-सा बना दिया है।

परिणामस्वरूप आज रासायनिक खेती की कोख से तरह तरह की बीमारियां पैदा हो रहीं हैं। इससे न सिर्फ इंसान पीड़ित हुआ है बल्कि पर्यावरण के तमाम प्राणी प्रभावित हुए हैं। वे अपने स्वाभाविक वजूद खोते जा रहे हैं। इस विकट परिस्थिति को देख दुनियाभर के नीति निर्धारक घबरा उठे हैं। इसी घबराहट से पैदा हुआ है – जैविक खेती के प्रति आकर्षण!

लेकिन यहां आकर भी नीतिनिर्धारक मोटे तौर पर तीन खेमों में बंटे दिख रहे हैं। एक खेमा इसका तकनीकि समाधान ढूंढ रहा है – जो पूंजीवाद के कब्जे में है। तो दूसरा खेमा, विज्ञान और तकनीक को मर्यादित करते हुए मानव-स्वभाव तथा फूड हैबिट में, बदलाव को देख रहा है। लेकिन एक तीसरा खेमा भी है जो इन तमाम संकटों से मुकाबला के लिए आदिवासियत को प्रश्रय देना चाहता है। यानी प्रकृति की ओर लौटने की पहल ! बहस जारी है। बहस जारी रहनी ही चाहिए। क्योंकि इन्हीं मंथनों से निकलेगा भविष्य का रास्ता !

'संवाद' ने इन्हीं बहसों और प्रक्रियाओं को समेटने की एक कोशिश "पर्यावरण संवाद" के माध्यम से शुरू की है। पहले चरण में हमने झारखंड की सात वैसी संस्थाओं को शामिल किया है, जिसने जैविक खेती और पानी के परंपरागत जल संग्रहण को अपने प्रयोग का क्षेत्र बनाया है। इसमें कुछ वैसी संस्थाएं हैं जिनका लंबा अनुभव रहा है तो कुछ ऐसी संस्थाएं भी हैं जिसने अपने अनुभव से उपजे ज्ञान के बाद उक्त विषयों को कार्य-मुद्दा माना है।

इन तमाम संस्थाओं की मदद से ही यह अंक आकार ग्रहण कर सका। इसके लिए उक्त तमाम संस्थाओं के संचालक समूहों को शुक्रिया और जोहार! पाठक भी इस बहस में शामिल हों – ऐसी अपेक्षा है।

देशज खाद्यान्नों से ही भूखमुक्त बनेगा झारखंड

- जेम्स हेरंज

झारखंड जिस भाँति सदियों से सांस्कृतिक विविधताओं का इलाका रहा है, उसी भाँति यह खाद्य विविधताओं से परिपूर्ण क्षेत्र के रूप में भी अपनी अलग पहचान रखता है। भारत में गरीबी के मानदण्ड मुख्यतः 1979 में गठित अलघ समिति की सिफारिशों पर आधारित है। इस समिति की सिफारिशों के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी और शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी प्रतिदिन से कम ग्रहण करने वाले व्यक्ति को गरीब माना जाता है। ग्रामीण खेतिहर समुदाय कृषि, पशुपालन और वनोपज से ही अपनी प्राथमिक खाद्य एवं पोषण जरूरतों से पूरा कर सकते हैं। इसे बाजार के भरोसे पूरा करना एक मृगमरीचिका है। हमारे पुरखों के देशज ज्ञान जो यहाँ की मिट्टी, हवा, पानी जैसे प्राकृतिक वातावरण में सदियों के व्यवहारिक प्रयोगों से स्थापित हुए हैं, उनकी प्रासांगिकता कम हुई है, ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। हाँ, देश में चलाए गए हरित क्रांति की वजह से इन पारंपरिक देशज कृषि प्रणाली एक हद तक क्षीण जरूर हुई है। क्योंकि सरकार की नीतियाँ, योजनाएं, कृषि सब्सिडी आदि पूरी तरह हरित क्रांति के मॉडल को बढ़ावा देने के लिए थी। उदाहरण के लिए आधुनिक कृषि के लिए ट्रैक्टर, डीजल पंप पर सब्सिडी और बड़ी सिंचाई परियोजना का निर्माण। कृषि उपकरण, खाद एवं बीज सब्सिडी, न्यूनतम समर्थन मूल्य इन सबका फायदा बड़े किसान और मैदानी इलाकों के बड़े जोत के आकार वालों को मिला। साथ ही औद्योगिक घरानों को भी सरकार समर्थित बाजार सुलभ हुआ।

लेकिन झारखंड (सन 2000 से पूर्व बिहार) के पठारी इलाकों में हरित क्रांति मॉडल के लिए स्थानीय समुदाय ने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई और न यहाँ की भौगोलिक संरचना के हिसाब से यह फिट बैठती थी। क्योंकि हरित क्रांति में प्रमुख तौर पर धान और गेहूँ उत्पादन पर ध्यान केंद्रित किया गया, जबकि हमारे पाठ-पठार में इन दोनों फसलों की खेती की दूर-दूर तक संभावना नहीं थी। हमारी कृषि प्रणाली पूर्णत: वर्षा पर आधारित थी तथा ऊँची-नीची पहाड़ी जमीन पर हल बैल से जुताई कर ही खेती संभव थी। आज भी संथाल परगना के पहाड़िया गाँव में पहाड़ों के ढलान पर जो झूम खेती की जाती है उसमें बैलों से भी जुताई करना संभव नहीं होता है। इसके बाद भी सरकारी योजनाएं थोपी जाती रही और भूमि समतलीकरण जैसी योजनाओं के कारण यहाँ की ऊपरी उपजाऊ मिट्टी को बर्बाद किया जाता रहा।

झारखंड का लातेहार जिला एक आदिवासी बहुल जिला है। यहाँ राज्य की लगभग अधिकांश जनजातियाँ जिसमें आदिम जनजातियाँ भी शामिल हैं, पाए जाते हैं। ये समुदाय सदियों से मोटे अनाजों यथा गोंदली, मड़ुआ, सवाँ, बाजरा, मकई इत्यादि अपने कृषि एवं खाद्य प्रणाली में शामिल करते रहे हैं। लेकिन दुर्भाग्य से इनके द्वारा उगाए गए उन पोषण से भरपूर खाद्यान्न को न सरकारी प्रोत्साहन मिला और न ही बाजारों में उत्पादित अनाजों की माँग हुई। उल्टे ऐसे अनाजों को गरीबों का खाना की संज्ञा से नवाजा जाता रहा और पोषण के लिए सभी आवश्यक तत्वों से भरपूर भोज्य पदार्थों को ग्रामीणों के थाली से दूर कर दिया गया।

इन असंगत प्रयासों का दुष्परिणाम राज्यभर के जनसंख्या पर साफ परिलक्षित होता है। नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे 2020-21 के आंकड़ों के अनुसार 6-59 महीने की उम्र के 67.5% बच्चे एनीमिया से पीड़ित हैं, यहाँ 1000 बच्चे जो पांच

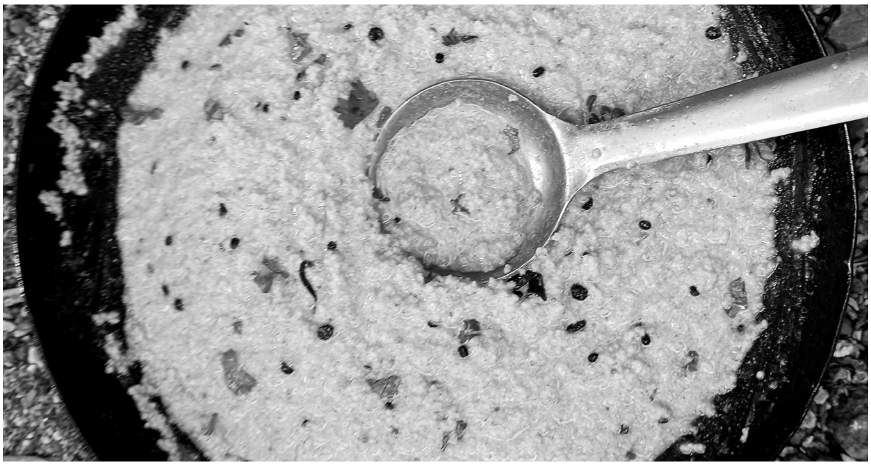

वर्ष से कम उम्र के होते हैं, इनमें से 28 बच्चे अपना पाँचवाँ जन्म दिन नहीं मना पाते हैं। अर्थात कई वजहों से उनकी मृत्यु 5 साल के पहले ही हो जाती है। 15-49 वर्ष की सभी महिलाएं जो एनीमिया से पीड़ित हैं- उनकी संख्या 65.3% हैं। 15-49 वर्ष की 56.8 % गर्भवती महिलाएं एनीमिया से पीड़ित हैं। 15-49 वर्ष की आयु के 29.6% पुरुष जो एनीमिया से पीड़ित हैं। 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चे जो अविकसित हैं (उम्र के अनुपात में ऊँचाई) उनकी संख्या वे 39.6% है। इसी प्रकार 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चे जो कमज़ोर हैं, जिनका उम्र के हिसाब से वजन कम है, 39.4% है। यहाँ 5 वर्ष से कम उम्र के ऐसे बच्चे जिनका वजन अत्यंत कम है 9.1% है। सनद रहे कि जिन बच्चों का ठीक ढंग से शारीरिक और मानसिक रूप से विकास नहीं हो पा रहा है। वो भावी पीढ़ी के लिए कमजोर बुनियाद हैं, वहीं उन बच्चों में मृत्यु का खतरा सामान्य बच्चों की तुलना में 11 गुणा अधिक हो जाता है।

यहाँ इन आकड़ों को उल्लेख करने का प्रमुख उद्देश्य है कि हम कृषि और खाद्य प्रणाली का अंधानुकरण करते रहे और हमारी स्वास्थ्य संबंधी शारीरिक परिस्थितियाँ दिन ब दिन बिगड़ती चली गई। हम झारखंडी आदिवासी स्वास्थ्य मापदंडों में नकारात्मक रूप से बहुत पीछे छूट चुके हैं, इन्हें बेहतर स्थिति में लाने के लिए कुछ पीढ़ियाँ गुजर जाएंगी। हाल के वर्षों में शहरी समाज को भी पारंपरिक मोटे अनाजों के पोषण गुणों की महत्ता समझ आने लगी है। कोई इसे सुपर फूड के नाम से इन अनाजों की ब्रांडिंग कर रहा है, तो भारत सरकार इन्हे 'श्री अन्न' के नाम से प्रचारित कर रहा है। वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष घोषित किया गया था। सरकार के योजनाओं के समानांतर गाँव में इन अनाजों की खेती फिर से जोर पकड़ने लगी है। यदि वर्ष 2024 के कृषि मौसम का आकलन करें तो जिले के मनिका, बरवाडीह, गारु, महुआडाड़ प्रखंडों में मड़ुआ और गोंदली की अच्छी खासी खेती आदिवासियों ने की है। इस मुहिम में महिलायें अग्रिम भूमिका निभा रहीं हैं। ये स्थायित्व का संकेत है।

बरवाडीह प्रखण्ड स्थित मुरु गाँव की रहने वाली 36 वर्षीय महिला किसान कमोदा देवी अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए बताती हैं, उन्होंने संस्था मल्टी आर्ट एसोसिएशन के मार्गदर्शन एवं तकनीकी सहयोग से आधा किलो सवाँ और 1 किलो मड़ुआ की बुआई हल बैल से खेत जोतकर की थी। देखभाल सिर्फ इतना ही की थी कि पशु, पक्षी और जानवर फसलों को नुकसान न पहुंचाए। देखते ही देखते 3 माह में फसल तैयार हो गयी। कुल 35 किलो मड़ुआ पैदा हुआ और 5 किलो सांवा। इन फसलों को न मकई की तरह कोड़ा और खाद डालना पड़ा था और न ही धान की तरह रोपाई करना पड़ा। अब ये परिवार साल भर खाने और अगले साल उपयोग किए जाने के लिए बीजों के मामले में पूरी तरह आत्मनिर्भर हैं। ऐसे ही अनुभव बुधनी देवी, बारीचट्टान गाँव के हीरामन परहिया, रितु कोरवा, बसंती देवी सरीखे 110 से अधिक किसानों ने साझा किए हैं। महुआडाड़ प्रखण्ड के पाठ क्षेत्र यथा ओरसा पाठ, नेतरहाट, सोहर पाठ जैसे पंचायतों में निवासरत ग्रामीणों की कृषि प्रणाली की बात करें तो इन इलाकों की प्रमुख फसलें गोंदली, मड़ुआ और मकई (मक्का) है। लेकिन सरकारी उदासीनता एक प्रमुख वजह है जिसके कारण किसानों को इन सुपर फूड के उचित मूल्य नहीं मिल पा रहे हैं। यहाँ जो गोंदली किसान 30 रुपये किलो स्थानीय बाजारों में सेठ महाजनों को बेच देते हैं, वही गोंदली का चावल उन्हीं बाजारों में 100 रुपये प्रतिकिलो बिकता है।

पोषण गुणों से युक्त इन अनाजों को लेकर चिकित्सकों और डायटीशियनों के राय भी सकारात्मक आने लगे हैं। चिकित्सक वेंकटेश कात्यराज बताते हैं - 'प्रकृति ने हमारे शरीर के लिए तरह-तरह के औषधीय गुणों से युक्त खाद्य पदार्थ बनाया है, इसमें बाजरा भी काफी महत्वपूर्ण है। यह हमारे शरीर को गरम रखता है। कफ से आराम देता है। त्वचा के रंग को सुंदर करता है। भूख बढ़ाने में मदद करता है। बाजरे के प्रयोग जाड़े के मौसम में सभी उम्र के लोगों को जरूर करना चाहिए। वह कैंसर से भी बचाता है। लीवर को स्वस्थ रखता है। गठिया और अर्थराईटिश जैसे

संबंधित बीमारियों में लाभकारी है। मड़ुआ के आटे में कैल्सियम, आयरन, खनिज, प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट पर्याप्त पाया जाता है।'

मोटे अनाजों पर अनुसंधान करने वाली सरकारी संस्थान भारतीय मिलेट अनुसंधान संस्थान अपनी शोध ने ये प्रमाणित किया है कि चावल और गेहूं के मुकाबले मोटे अनाज (millet) में पोषण तत्व अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। यहाँ प्रस्तुत है पोषक तत्वों की मात्रा तालिका -

फसल	पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम अनाज)						
	प्रोटीन (ग्रा.)	फैट (ग्रा.)	फाईबर (ग्रा.)	खनिज लवण (ग्रा.)	आयरन (मि. ग्रा.)	कैल्सियम (मि. ग्रा.)	कैलोरी (kcal)
मड़ुवा	7.3	1.5	3.6	2.7	3.9	344	336
बाजरा	12.3	4.00	8	3.3	2.8	31	473
सांवा	11.2	3.9	10.1	4.4	15.2	11	342
गोंदली	7.7	1.0	7.6	1.5	9.3	17	329
गेहूँ	11.8	2	1.2	1.5	5.3	10	348
चावल	6.8	2.7	0.2	0.6	0.7	41	362

संस्था के प्रयास से इस वर्ष सवा सौ किसानों को बीज और पारंपरिक तरीके से खेती की तकनीक मुहैया कर मोटे अनाजों की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। महुआडाड़ प्रखण्ड के उन पाठ इलाकों में जहाँ बहुतायत में इन खाद्यान्नों की खेती की जा रही है। वहाँ गोंदली को प्रोसेस करने के प्रोसेसिंग मिक्सर मुहैया कराकर 53 ग्रामीण महिलाओं को प्रशिक्षण दी गई। इसके साथ ही युवा पीढ़ी इन अनाजों से तैयार स्वादिष्ट व्यंजनों को दैनिक आहार के रूप में स्वाभिमान से ग्रहण करे, उन्हें ये आत्मग्लानि न हो कि वह गरीबों का खाना खा रहा है। इन बिंदुओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए विभिन्न व्यंजन तैयार करने की विधियाँ भी महिलाओं को सिखाई जा रही है। इससे इन परिवारों के सदस्यों का जहाँ एक ओर पोषण सुरक्षा सुनिश्चित होगी, वहीं हमारे पूर्वजों के देशज ज्ञान का भी संरक्षण होगा। सिर्फ इतना ही नहीं तेजी से बदलते जलवायु परिवेश में भी हमारे लोग सहजता से फसलों का उत्पादन कर सकेंगे तथा भूख के संकट से स्वयं को सुरक्षित रख सकेंगे। ■

सुरक्षित आहार, सुखी संसार

- राजेश झा

ऐसे समय में जब टिकाऊ और सुरक्षित भोजन का उत्पादन सर्वोपरि है, सेंटर फॉर वर्ल्ड सॉलिडेरिटी (सीडब्लूएस) बदलाव के अगुवा के रूप में उभर कर सामने आया है। अपने समुदाय-संचालित प्रयासों और न्यूट्रीस्मार्ट कम्युनिटी और भूमि का जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से, सीडब्लूएस किसानों को प्राकृतिक खेती के तौर-तरीकों की ओर बढ़ने के लिए सशक्त बना रहा है, जिससे उपभोक्ताओं के लिए सुरक्षित भोजन और किसानों के लिए स्थायी आजीविका सुनिश्चित हो रही है।

झारखंड में कृषि का कायापलट

झारखंड में प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने के लिए सीडब्लूएस एक केंद्र के रूप में रहा है। यहाँ के किसानों ने पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं को अपनाया है, जिससे रासायनिक इनपुट पर उनकी निर्भरता कम हुई है। झारखंड के पूर्वी सिंहभूम जिले स्थित धालभूमगढ़ के चिरुगोड़ा गाँव के किसान बैजू हेम्ब्रम इस बदलाव के ताजा उदाहरण हैं। सीडब्लूएस की मदद से, बैजू ने प्राकृतिक खेती के तरीकों को अपनाया, जिसमें वर्मी कंपोस्टिंग और बहु-फसल तकनीक को एकीकृत किया गया। आज उनके खेत में रसायन मुक्त सब्जियाँ और

अनाज उगाए जा रहे हैं, जो सुरक्षित भोजन की बढ़ती माँग को पूरा करते हुए उनके परिवार की आय में बढ़ोत्तरी करते हैं।

2019-20 में बैजू की कृषि यात्रा परिवर्तनकारी रही, जिसने कम समय में उल्लेखनीय परिणाम दिए। इस सुव्यवस्थित प्रयास ने इस बात पर प्रकाश डाला कि कैसे रणनीतिक योजना और पर्यावरण के अनुकूल तकनीकें खेती के तरीकों को कुशलतापूर्वक बेहतर बना सकती हैं।

बैजू ने पारंपरिक खेती के तरीकों से इतर आगे बढ़ने का फैसला रासायनिक-गहन कृषि से जुड़ी सीमाओं और पर्यावरणीय नतीजों को ध्यान में रखकर किया। कीटों के संक्रमण, मिट्टी की हानि और क्षरण और आर्थिक अस्थिरता जैसी लगातार चुनौतियों ने बैजू को एक समग्र समाधान की तलाश हेतु प्रेरित किया। एक रणनीतिक कदम उठाते हुए बैजू आजीविका भूमि का किसान उत्पादक कंपनी लिमिटेड में शामिल हो गए, जो सेंटर फॉर वर्ल्ड सॉलिडेरिटी (सीडब्लूएस) द्वारा समर्थित है।

बैजू का आजीविका भूमिका एफपीओ के साथ जुड़ाव उनकी कृषि प्रथाओं में एक महत्वपूर्ण अवसर था। बैजू ने प्राकृतिक खेती के तरीकों को अपनाया और घर पर ही जैविक खाद और कीटनाशक तैयार करना और उनका इस्तेमाल करना सीखा। एफपीओ ने बैजू का समर्थन करने, उन्हें स्थानीय बाजारों से जोड़ने और उन्हें ज्ञान और संसाधनों से सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जीवामृत, घनजीवामृत, नीमास्त्र और जैव अपघटकों के उपयोग सहित पर्यावरण अनुकूल प्रथाओं को अपनाने से बैजू की कृषि पद्धति में परिवर्तन आया और उनकी भूमि एक समृद्ध पारिस्थितिकी तंत्र में बदल गई।

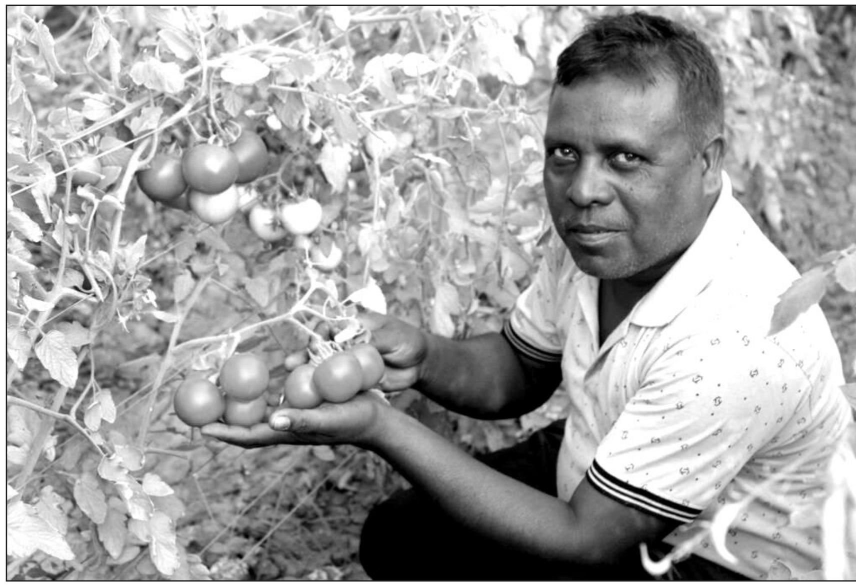

चित्र - 1 बैजू गर्व से अपनी कटी हुई फसल दिखा रहे हैं

एक और प्रेरक कहानी झारखंड के सरायकेला स्थित राजनगर के चंगुआ गांव की है। यह वाकया 34 वर्षीय किसान नृप नारायण महतो की है। किसान परिवार में जन्मे नृप नारायण ने पारंपरिक खेती के संघर्षों को नजदीक से देखा है जिसकी बानगी है - अनिश्चित मुनाफा, रासायनिक इनपुट पर निर्भरता और वित्तीय अस्थिरता। सेंटर फॉर वर्ल्ड सॉलिडेरिटी (सीडब्लूएस) द्वारा आयोजित प्राकृतिक कृषि पर प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने के बाद उनके जीवन में सकारात्मक बदलाव आया। रासायन मुक्त कृषि की संभावनाओं से प्रभावित होकर नृप नारायण ने कम पैदावार के शुरुआती डर के बावजूद प्राकृतिक तरीकों को अपनाया।

शुरुआत में यह यात्रा चुनौतीपूर्ण थी, क्योंकि तब पैदावार रासायनिक खेती की तुलना में कम थी। हालांकि, महंगे कृषि-इनपुट पर बचाए पैसे और भोजन की बेहतर गुणवत्ता ने महत्वपूर्ण अंतर उत्पन्न किया। पौष्टिक उपज ने उनकी माँ की गैस्ट्रिक समस्याओं को हल किया, उनके बच्चों के स्वास्थ्य में सुधार किया और यहाँ तक कि उन्हें व्यक्तिगत रूप से भी लाभ पहुँचाया। समय के साथ, उनकी मिट्टी की उर्वरता और जल धारण क्षमता में सुधार हुआ, जिससे उन्हें अपने खेतों में कम पानी देना पड़ा, जो अप्रत्याशित वर्षा के सामने एक महत्वपूर्ण लाभ था।

पिछले तीन वर्षों से, नृप नारायण ने विशेष रूप से घर में तैयार जैव-उर्वरकों का उपयोग किया है, जिससे अपने जैविक उत्पादों के लिए उचित मूल्य प्राप्त करने की चुनौतियों के बावजूद लागत में कटौती हुई है और मिट्टी की सेहत में सुधार हुआ है।

टिकाऊ कल के लिए देशी चावल की किस्मों का पुनर्जीवन

छोटे किसानों को अक्सर अप्रत्याशित पैदावार, उच्च इनपुट लागत और कीटों के संक्रमण जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से बढ़ जाती हैं। हालांकि, सेंटर फॉर वर्ल्ड सॉलिडैरिटी (सीडब्लूएस) के नेतृत्व में अभिनव प्रयास पारंपरिक चावल की किस्मों में नई जान फूंक रहे हैं, जो इन मुद्दों के सामने टिकाऊ समाधान पेश कर रहे हैं।

बालीभोजना, भूतमुरी, केरलसुंदरी और कालानमक जैसी देशी किस्मों को पुनर्जीवित करने की पहल के माध्यम से, सीडब्लूएस परंपरा को नवाचार के साथ जोड़कर कृषक समुदायों को सशक्त बना रही है। इन चावल किस्मों को उनके लचीलेपन, कम इनपुट आवश्यकताओं और बदलती जलवायु के अनुकूल होने के लिए माना जाता है।

बीज संप्रभुता पर ध्यान केंद्रित करके और स्थानीय बीज उत्पादन को सुविधाजनक बनाकर, सीडब्लूएस कृषक समुदायों के भीतर स्वतंत्रता और स्थिरता को बढ़ावा देता है। उनकी पहल पारंपरिक किस्मों को अपनाने को प्रोत्साहित करती है, जबकि पारिस्थितिक खेती के तरीकों को बढ़ावा देती है जो स्वस्थ मिट्टी और अधिक लचीले पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करती हैं।

पारंपरिक ज्ञान और संसाधनों का पुनर्जीवन

सीडब्लूएस देशभर के राज्यों में प्राकृतिक खेती और टिकाऊ आजीविका को बढ़ावा देने के लिए एक विविध दृष्टिकोण अपनाता है। झारखंड में सीडब्लूएस ने तालाबों और कुओं को पुनर्जीवित करने, साल भर सिंचाई सुनिश्चित करने और फलियों और सब्जियों की खेती को प्रोत्साहित करने जैसी प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन गतिविधियों को लागू किया है, जो पूरे समुदायों के लिए खाद्य सुरक्षा को मजबूती प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, सतत एकीकृत कृषि प्रणाली (एसआईएफएस) में क्षमता निर्माण प्रशिक्षण किसानों को टिकाऊ प्रथाओं को अपनाने के लिए सशक्त बनाता है। आंध्र प्रदेश में सीडब्लूएस प्राकृतिक तरल उर्वरकों, जैव-कीटनाशकों और हर्बल

चित्र - 2 नृप नारायण महतो ध्यानपूर्वक कृषि कार्य करते हुए

टॉनिक पर प्रशिक्षण और प्रदर्शनों के माध्यम से गैर-रासायनिक खेती को बढ़ावा देती है। खाद्य प्रणाली संवाद (एफएसडी) के माध्यम से, सीडब्लूएस हितधारकों के बीच सहयोग को बढ़ावा देती है ताकि टिकाऊ खाद्य प्रणालियों को उत्प्रेरित किया जा सके।

सीडब्लूएस किसानों और लघु एवं मध्यम उद्यमों (एसएमई) के लिए बाजार तक सुलभता, संपर्क और व्यावसायिक अवसरों को बढ़ाने के लिए एक गतिशील नेटवर्किंग प्लेटफ़ॉर्म के रूप में भूमि का लाभ उठाती है। भूमि का किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ), एसएमई और पर्यावरण के प्रति जागरूक व्यवसायों के बीच कनेक्शन की सुविधा प्रदान करता है, जिससे किसानों को उचित बाजार सुलभता का लाभ मिल सके। साथ ही, एसएमई को उच्च गुणवत्ता वाले, स्थायी रूप से उत्पादित वस्तुओं तक पहुंच प्राप्त होती है, जिससे पारस्परिक रूप से लाभकारी संबंध बनते हैं। भूमि का के माध्यम से, सीडब्लूएस ज्ञान-साझाकरण कार्यक्रमों और वकालत के प्रयासों का भी समर्थन करता है, जिससे टिकाऊ कृषि और छोटे किसानों के अनुकूल बाजारों के लिए पारिस्थितिकी तंत्र मजबूत होता है।

सुरक्षित भोजन के लिए एक सामूहिक दृष्टिकोण

अपने अथक प्रयासों के माध्यम से, सेंटर फॉर वर्ल्ड सॉलिडेरिटी ने अन्य संस्थाओं के साथ भारत के अन्य राज्यों में प्राकृतिक और सुरक्षित भोजन के लिए अभियान चलाया है। सीडब्लूएस टिकाऊ खेती और बाजार तक सुलभता के बीच की खाई को पाटना जारी रखती है। झारखंड के हरे-भरे खेतों से लेकर पश्चिम बंगाल के हरियाली से भरे नजारों तक, परिवर्तन की कहानियाँ सामूहिक कार्रवाई और समुदाय द्वारा संचालित बदलाव की बानगी के प्रमाण हैं।

सुरक्षित खाद्य प्रथाओं को बढ़ावा देकर, सीडब्लूएस सभी को एक स्वस्थ, अधिक टिकाऊ भविष्य की ओर इस यात्रा में शामिल होने के लिए आमंत्रित करती है। साथ मिलकर, हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि हर जैविक भोजन न केवल हमारे शरीर को पोषण प्रदान करता है बल्कि धरती को भी पोषित करता है। ■

बदलते परिवेश में जैविक खेती की भूमिका

- 'प्रवाह' टीम

बदलते परिवेश में जैविक खेती की भूमिका महत्वपूर्ण होती जा रही है। जैविक खेती न केवल पर्यावरण को संरक्षित करती है, बल्कि स्वस्थ भोजन उपलब्ध कराने में भी सहायक है। यहाँ कुछ मुख्य्य बिंदु हैं जो बदलते परिवेश में जैविक खेती की भूमिका को स्पष्ट करते हैं-

पर्यावरण संरक्षण : जैविक खेती में रासायनिक खाद और कीटनाशकों का उपयोग नहीं होता, जिससे मिट्टी, पानी और वायु की गुणवत्ता बनी रहती है। यह जैव विविधता को भी बढ़ावा देता है।

स्वास्थ्य : जैविक उत्पादों में रासायनिक अवशेष नहीं होते, जिससे इनका सेवन स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होता है।

स्थिरता : जैविक खेती ने जलवायु परिवर्तन को सामना करने के लिए आवश्यक तकनीकों को अपनाया है, जैसे मिट्टी की उर्वरता बनाए रखना और जल संरक्षण।

आर्थिक लाभ : जैविक उत्पादों की मांग बढ़ रही है, जिससे किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त हो सकता है।

इस प्रकार, बदलते परिवेश में जैविक खेती की भूमिका केवल खेती के तरीके को बदलने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक दृष्टिकोण है जो पर्यावरण, स्वास्थ्य और आर्थिक स्थिरता को सुदृढ़ बनाने में सहायक है।

संस्कृति के आरम्भ से ही मानव जीवन के साथ-साथ पेड़ पौधों, कृषि पद्धतियों, पशुपालन आदि का धार्मिक, आर्थिक व सामाजिक प्रभाव रहा है। हमारे देश भारत में कृषि सिर्फ एक कार्य नहीं वरन एक पूरी संस्कृति है। इस कृषि संस्कृति ने ही भारत

की अनेक विविधताओं को बनाया।

जैविक खेती में 'प्रवाह' का योगदान

'प्रवाह' संस्था विगत कई वर्षों से कृषि क्षेत्र में जैविक खेती को बढ़ावा देने हेतु जैविक खेती के मूल उद्देश्यों व सिद्धांतों को किसानों के पास पहुँचाने का कार्य कर रही है। झारखंड (देवघर, दुमका, पाकुड़, साहेबगंज, खूंटी, चतरा जिला)एवं बिहार के विभिन्न जिलों में जलवायु अनुकूल खेती,

फ़ूड ट्रांसफॉर्मेशन तथा फसल विकास योजना इत्यादि थीम के साथ जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। विभिन्न गाँव में इस जैविक खेती प्रणाली को अपनाया जा रहा है साथ ही विभिन्न जैविक खाद, कीटनाशक, तथा रोग प्रबंधन हेतु दवाई का उत्पादन किया जा रहा है। 'प्रवाह' के द्वारा गाँव में किसान समूह (25 से 30 किसान) का गठन किया गया है जिसको कृषि विशेषज्ञ द्वरा प्रत्यक्ष ट्रेनिंग दी जाती है। जोकि अपने साथ साथ पूरे गाँव के किसानों को कृषि की उन्नत तकनीकी में जोड़ने का काम करते हैं।

इस परिस्थिति में जैविक खेती कृषि क्षेत्र के लिए वरदान साबित होगी। जैविक खेती से अभिप्राय कृषि की ऐसी पद्धति से है जिसमें रासायनिक खादों, दवाओं तथा कीटनाशकों आदि का प्रयोग नहीं किया जाए बल्कि इनके स्थान पर गोबर, गौमूत्र तथा प्राकृतिक अपशिष्ट से बनी खाद, कीटनाशक आदि का प्रयोग हो। जिससे मृदा की उर्वरा शक्ति में सुधार हो, पर्यावरण से प्रदूषण कम हो तथा विभिन्न कृषि मित्र कीट/जीव सुरक्षित रहें। जिससे उत्पादित फसलों से किसान की आय में वृद्धि के साथ ही मानवीय तथा पर्यावरणीय सुधार हो सके।

जैविक खाद एवं इसके गुण

जैविक कृषि हेतु कृत्रिम उर्वरक प्रतिबंधित हैं। जैव उर्वरक में गोबर की खाद, वर्मी कम्पोस्ट सर्वोत्तम है, क्योंकि

गोबर एवं गोमूत्र में नाइट्रोजन, एंजाइम्स एवं लवण पर्याप्त मात्रा में होते हैं जो भूमि में जैविक तत्वों की पूर्ति करते हैं तथा मृदा विन्यास को प्राकृतिक स्थिति में बनाये रखते हैं।

गोबर की खाद से उत्पादित खाद्य पदार्थ स्वादिष्ट एवं स्वास्थ्यवर्द्धक होते हैं, अतः गोबर की खाद से की गई खेती से निम्न लाभ होते हैं-

- भूमि में सूक्ष्म लाभकारी जीवाणुओं की वृद्धि होती है।
- सिंचाई के लिए कम पानी की आवश्यकता होती है क्योंकि भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ जाती है।
- पर्यावरण प्रदूषण मुक्त रहता है, खाद्यान्न पौष्टिक एवं स्वादिष्ट रहता है।

गाय के गोबर के कण्डे की राख में एक विशेष सुगन्ध होती है, जिसका प्रयोग कीटरोधक के रूप में भी किया जाता है

बीजामृत : बीजामृत एक जैविक पदार्थ है जो मुख्य रूप से भारतीय कृषि प्रणाली में उपयोग किया जाता है। इसे बीजों को स्वस्थ रखने और फसल की वृद्धि में सुधार करने के लिए तैयार किया जाता है। बीजामृत का मुख्य उद्देश्य बीजों में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाना और भूमि की उपजाऊ शक्ति को सुधारना है।

जैविक पद्धति द्वारा जैविक कीट एवं व्याधि नियंत्रण

जैविक कीट एवं व्याधि नियंत्रण के नुस्खे विभिन्न कृषकों के अनुभव के आधार पर तैयार कर प्रयोग किये गये हैं, जो कि इस प्रकार हैं-

गौ-मूत्र

गौमूत्र, कांच की शीशी में भरकर धूप में रख सकते हैं। जितना पुराना गौमूत्र होगा उतना अधिक असरकारी होगा। 12-15 मि.मी. गौमूत्र प्रति लीटर पानी में मिलाकर स्प्रेयर पंप से फसलों में बुआई के 15 दिन बाद, प्रत्येक 10 दिवस में छिड़काव करने से फसलों में रोग एवं कीड़ों में प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है जिससे प्रकोप की संभावना कम रहती है।

नीम के उत्पाद

नीम भारतीय मूल का पौधा है, जिसे समूल ही वैद्य के रूप में मान्यता प्राप्त है। इससे मनुष्य के लिए उपयोगी औषधियां तैयार की जाती हैं तथा इसके उत्पाद फसल संरक्षण के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं।

नीम पत्ती का घोल - नीम की 10-12 किलो पत्तियां, 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोंयें। पानी हरा पीला होने पर इसे छानकर, एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करने से इल्ली की रोकथाम होती है। इस औषधि की तीव्रता को बढ़ाने हेतु बेसरम, धतूरा, तम्बाकू आदि के पत्तों को मिलाकर काड़ा बनाने से औषधि की तीव्रता बढ़ जाती है और यह दवा कई प्रकार के कीड़ों को नष्ट

करने में उपयोगी सिद्ध है।

- नीम की निबोली नीम की निबोली 2 किलो लेकर महीन पीस लें इसमें 2 लीटर ताजा गौ मूत्र मिला लें। इसमें 10 किलो छांछ मिलाकर 4 दिन रखें और 200 लीटर पानी मिलाकर खेतों में फसल पर छिड़काव करें।
- नीम की खली जमीन में दीमक तथा व्हाइट ग्रब एवं अन्य कीटों की इल्लियां तथा प्यूपा को नष्ट करने तथा भूमि जनित रोग विल्ट आदि के रोकथाम के लिये किया जा सकता है। 6-8 क्विंटल प्रति एकड़ की दर से अंतिम बखरनी करते समय कूटकर बारीक खेम में मिलावें।

आइपोमिया (बेशरम) पत्ती घोल

आइपोमिया की 10-12 किलो पत्तियां, 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोंये। पत्तियों का अर्क उतरने पर इसे छानकर एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करें इससे कीटों का नियंत्रण होता है।

मट्ठा (छाछ)

मट्ठा, छाछ, दही आदि नाम से जाना जाने वाला तत्व मनुष्य को अनेक प्रकार से गुणकारी है और इसका उपयोग फसलों मे कीट व्याधि के उपचार के लिये लाभप्रद हैं। मिर्ची, टमाटर आदि जिन फसलों में चुर्रामुर्रा या कुकड़ा रोग आता है, उसके रोकथाम हेतु एक मटके में छाछ डाकर उसका मुंह पोलीथिन से बांध दे एवं 30-45 दिन तक उसे मिट्टी में गाड़ दें। इसके पश्चात् छिड़काव करने से कीट एवं रोगों से बचत होती है। 100-150 मि.ली. छाछ 15 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करने से कीट-व्याधि का नियंत्रण होता है। यह उपचार सस्ता, सुलभ, लाभकारी होने से कृषकों मे लोकप्रिय है।

मिर्च/लहसुन

आधा किलो हरी मिर्च, आधा किलो लहसुन पीसकर चटनी बनाकर पानी में घोल बनायें और इसे छानकर 100 लीटर पानी में घोलकर, फसल पर छिड़काव करें। 100 ग्राम साबुन पावडर भी मिलायें। जिससे पौधों पर घोल चिपक सके। इसके छिड़काव करने से कीटों का नियंत्रण होता है।

लकड़ी की राख

1 किलो राख में 10 मि.ली. मिट्टी का तेल डालकर पाउडर का छिड़काव 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से करने पर

एफिड्स एवं पंपकिन बीटल का नियंत्रण हो जाता है।

ट्राईकोडर्मा

ट्राईकोडर्मा एक ऐसा जैविक फफूंद नाशक है जो पौधों में मृदा एवं बीज जनित बीमारियों को नियंत्रित करता है।

बीजोपचार में 5-6 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपयोग किया जाता है। मृदा उपचार में 1 किलोग्राम ट्राईकोडर्मा को 100 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई खाद में मिलाकर अंतिम बखरनी के समय प्रयोग करें।

कटिंग व जड़ उपचार में 200 ग्राम ट्राईकोडर्मा को 15-20 लीटर पानी में मिलाये और इस घोल में 10 मिनट तक रोपण करने वाले पौधों की जड़ों एवं कटिंग को उपचारित करें।

3 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10-15 दिन के अंतर पर खड़ी फसल पर 3-4 बार छिड़काव करने से वायुजनित रोग का नियंत्रण होता है।

जैविक खेती के लाभ : जैविक खेती के कई महत्वपूर्ण लाभ हैं-

- **स्वास्थ्यवर्धक उत्पाद :** जैविक खेती में रासायनिक खाद और कीटनाशकों का उपयोग नहीं किया जाता, जिससे उत्पाद प्राकृतिक और स्वास्थ्यवर्धक होते हैं।
- **पोषण तत्वों की अधिकता :** जैविक फसलों में पोषण तत्व जैसे विटामिन, खनिज और एंटीऑक्सीडेंट्स अधिक मात्रा में होते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए लाभकारी हैं।
- **पर्यावरण की सुरक्षा :** जैविक खेती पर्यावरण के लिए कम हानिकारक होती है। यह भूमि, जल और जैव विविधता को संरक्षित करती है।
- **भूमि की उर्वरता :** जैविक खेती में मिट्टी में जैविक पदार्थों के समावेश से भूमि

किसान की कलम से - एक

मेरा नाम रानी देवी है, गाँव कुशमाह जोकि सोनारैथारी ब्लाक देवघर के अंतर्गत आता है। मेरे परिवार में मेरे पति और दो बच्चे हैं। हमारी आजीविका खेती पर ही निर्भर है। विगत समय पहले खेती के साथ साथ हमें मजदूरी करने भी जाना पड़ता था क्योंकि खेती में लागत अधिक होने के कारण हम सही से खेती भी नहीं कर पा रहे थे। 'प्रवाह' संस्था द्वारा खेती बाड़ी को लेकर कई कार्यक्रम चलाये जा रहे थे। मैंने भी इस कार्यक्रम में हिस्सा लेना शुरू किया और जाना कि कैसे घरेलू सामग्री, गाय का गोबर और गौमूत्र, फसल अपशिष्ट से खाद तैयार की जा सकती है और खेती में लगने वाली लागत को कम किया जा सकता है। विगत पांच वर्षों से मैं जैविक खाद (गोबर खाद, गड्डा खाद, वर्मी कम्पोस्ट आदि) का उत्पादन कर रही हूँ और उचित मूल्य पर इसको बेचकर घर खर्च में योगदान दे रही हूँ। मेरे लिए यह एक व्यवसाय से कम नहीं है। जिसका परिणाम मेरे खेत से उपजी फसल की गुणवत्ता से देखा जा सकता है।

सर्वप्रथम 'प्रवाह' संस्था के सहयोग से मैंने वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि को सीखा और 9×9×3 फीट का वर्मी बेड बनाकर तैयार किया जिसमें देशी का गाय के गोबर, रसोई का कचरा, सुखा पत्ता, हरा पत्ता और केंचुआ से वर्मी खाद बनाना शुरू किया जोकि 60 दिन में बनकर तैयार हो जाता है। एक वर्मी बेड से लगभग 6 से 7 क्विंटल वर्मी खाद प्राप्त हो जाता है जिसको अपने खेत में प्रयोग के साथ साथ कुछ मात्रा 6 रुपया प्रति किलो की दर से मैंने अच्छी तकनीक से एक वर्ष में तीन से चार बार वर्मी तैयार करना शुरू किया और साथ में फसल प्रबंधन हेतु जीवामृत, घनजीवामृत, ब्रह्मास्त्र, दशपरनी तथा तरल गौमूत्र खाद इत्यादि का उत्पादन शुरू किया।

एक वर्मी वेड से लाभ 7 क्विंटल खाद × 6 रुपया = 4200 रुपया

एक वर्ष में चार बार खाद बनाने पर 4200 × 4 = 16800 रुपया का आमदनी होता है जिससे मेरी फसल लागत कम हुई है और मुझे जैविक खेती के लिए बाहरी खादों का विकल्प भी मिल गया। आज मुझे देख कुशमाह गाँव में बहुत किसान इस जैविक प्रणाली को सीख रहे हैं साथ 'प्रवाह' संस्था के माध्यम से उनको ट्रेनिंग, वर्मी बेड बनाने हेतु तथा फसल प्रबंधन के लिए सहयोग प्रदान किया जा रहा है।

किसान की कलम से - दो

मेरा नाम संजय हांसदा है, गाँव पिपरा (सोनारीयथारी, देवघर) है। मेरी आजीविका खेती पर निर्भर है और मैं मौसम के आधार पर धान, गेंहू, मूंग आदि की फसलों की खेती करता था साथ ही खेती में लगने वाली लागत इतनी बढ़ने लगी कि पूरे साल में एक फसल लेना ही संभव रह गया था।

विगत दो वर्ष पहले में 'प्रवाह' संस्था द्वारा चलाये जा रहे जैविक खेती कार्यक्रम में जुड़ा और विभिन्न प्रकार की जैविक खेती ट्रेनिंग में भाग लेना शुरू किया, जिसके पश्चात मैंने अपने ही प्रक्षेत्र पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के द्वारा ही खाद निर्माण, कीटनाशक निर्माण तथा फसल बदवार हेतु खाद का निर्माण करना शुरू किया, जिससे मेरी प्रति एकड़ खेत की लागत कम हुई और बाजार पर जो उर्वरक, कीटनाशकों आदि पर निर्भरता थी वो अब खत्म हो गयी जिससे मेरे खेत में फिर से मैं तीन से चार फसल प्रति वर्ष लेने लगा और अच्छा जैविक उत्पाद होने से बाजार का अच्छा मूल्य भी मिलना शुरू हुआ जिससे प्रत्यक्ष रूप से मेरी आमदनी में वृद्धि हुई।

की उर्वरता बढ़ती है, जिससे भविष्य में फसल के उत्पादन में सुधार होता है।

- **कीट और बीमारियों का प्राकृतिक नियंत्रण** : रासायनिक कीटनाशकों के बजाय प्राकृतिक तरीकों का उपयोग करने से कीटों और बीमारियों का संतुलन बनाए रखा जा सकता है।
- **स्थायी कृषि प्रणाली :** जैविक खेती एक सतत कृषि प्रणाली है जो दीर्घकालिक लाभ प्रदान करती है और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन नहीं करती।
- **आर्थिक लाभ :** जैविक उत्पादों की बाजार में मांग बढ़ती जा रही है, जिससे किसानों को बेहतर मूल्य मिल सकता है।
- **समुदाय का विकास :** जैविक खेती स्थानीय स्तर पर समुदायों को जोड़ती है और किसानों को एक-दूसरे के साथ सहयोग करने का अवसर देती है।
- **जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीला:** जैविक खेती की प्रणालियाँ अधिक लचीली होती हैं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को सहन कर सकती हैं।

महत्वपूर्ण चुनौतियाँ : जैविक खेती के अनेक लाभों के बावजूद, इसके सामने कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियाँ भी हैं। ये चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं:

- **उत्पादन में कमी :** जैविक खेती में रासायनिक कीटनाशक और उर्वरक का उपयोग न करने के कारण उत्पादन में कुछ समय तक कम हो सकता है।
- **ऊर्जा और समय की आवश्यकता :** जैविक खेती के लिए अधिक मानवीय श्रम और समय की आवश्यकता हो सकती है, जिससे उत्पादकता प्रभावित हो सकती है।
- **कीट प्रबंधन की चुनौतियाँ :** जैविक किसान कीटों के नियंत्रण के लिए प्राकृतिक तरीकों का उपयोग करते हैं, लेकिन ये तरीके कभी-कभी कम प्रभावी हो सकते हैं, जिससे फसल को नुकसान हो सकता है।
- **उर्वरता का नियंत्रण :** जैविक खेती में मिट्टी की उर्वरता का ध्यान रखना आवश्यक है, जो कुछ किसानों के लिए चुनौतीपूर्ण हो सकता है।
- **बाजार में प्रतिस्पर्धा :** जैविक उत्पादों का बाजार मूल्य आमतौर पर अधिक होता है, लेकिन कई बार उपभोक्ताओं के लिए यह महंगा प्रतीत हो सकता है, जिससे बाजार में प्रतिस्पर्धा बढ़ती है।
- **प्रमाणन प्रक्रिया :** जैविक खेती के लिए प्रमाणन की प्रक्रिया जटिल और महंगी हो सकती है, जिससे कुछ किसान इस प्रक्रिया से दूर रह सकते हैं।
- **जलवायु परिवर्तन का प्रभाव :** जलवायु परिवर्तन जैविक खेती को भी प्रभावित कर सकता है, जैसे अधिक बारिश या सूखा, जिससे फसल उत्पादन में संदेह उत्पन्न हो सकता है।
- **तकनीकी जानकारी की कमी :** कई किसानों को जैविक खेती की नई तकनीकों और तरीकों के बारे में सही जानकारी नहीं होती है, जिससे उनके लिए यह प्रणाली अपनाना कठिन हो सकता है।
- **सीमित संसाधन :** कुछ क्षेत्रों में जैविक खेती के लिए आवश्यक प्राकृतिक संसाधनों की कमी हो सकती है, जैसे कि जैविक खाद और कीटों का प्राकृतिक शत्रु।

इन चुनौतियों के बावजूद, 'प्रवाह' किसान और वैज्ञानिकों के साथ जैविक खेती को अपनाने और इसके लाभों को बढ़ाने के लिए निरंतर प्रयास कर रहा है। हमें उम्मीद है कि इस प्रयोग में एक दिन हमसब जरुर सफल होंगे। ■

टिकाऊ कृषि विकास और जल संरक्षण : एनबीजेके के बढ़ते कदम

नव भारत जागृति केंद्र (एनबीजीके) झारखंड – बिहार की एक प्रमुख स्वैच्छिक संस्था है, जिसकी स्थापना श्री गिरिजा नंदन "गिरिजा सतीश" के नेतृत्व में अन्य तीन इंजीनियरिंग स्नातकों ने 1971 में किया था। हजारीबाग जिला अंतर्गत चौपारण प्रखंड के बहेरा गाँव में इसका मुख्यालय और हजारीबाग शहर के निकट अमृत नगर गाँव में संयोजन कार्यालय है। एनबीजेके के संस्थापकगण जेपी आंदोलन में शामिल रहे हैं और संस्था की शुरुआत जेपी के सहयोग से ही हुई थी। इस पर महात्मा गांधी, संत विनोबा और लोकनायक जयप्रकाश नारायण के विचारों का प्रभाव है और **संस्था प्रमुख श्री गिरिजा सतीश जी को पिछले वर्ष अपने गांधीवादी रचनात्मक कार्यों हेतु जमनालाल बजाज पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।**

एनबीजेके ने पांच दशकों से अधिक के कालखंड में समाज के अभिवंचित वर्गों हेतु अनगिनत काम किये हैं लेकिन इसकी कार्य पद्धति समावेशी है। शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका, छोटी संस्थाओं को मदद और जनपैरोकारी जैसे पांच मुख्य लेकिन अंतर्संबंधित क्षेत्रों में इसका काम बंटा है। यहाँ हम आजीविका या सामाजिक – आर्थिक विकास के तहत कृषि विकास में संस्था के योगदान की चर्चा करेंगे। इसके साथ ही स्वास्थ्य के साथ जुड़े स्वच्छता कार्यक्रम अंतर्गत कचड़ा पुनर्चक्रीकरण के जरिये जैविक खाद बनाने की मुहिम पर भी फोकस करेंगे।

पहले जैविक खेती की बात करते हैं। 2002 में एनबीजेके ने ठोस कूड़ा प्रबंधन पर एक महत्वाकांक्षी परियोजना "क्लीन झारखंड" की शुरुआत की थी। इसके तहत मुख्य रूप से रांची और बाद में हजारीबाग, कोडरमा, पटना आदि शहरों में लगभग 70 हजार घरों से कचड़ा संग्रहण कर उसका निस्तारण किया जाता था। इस परियोजना के माध्यम से रांची के ओरमांझी प्रखंड स्थित चकला गाँव में संस्था की ओर से पहली बार बड़े पैमाने पर गोबर और रद्दी-कतरन कागज से क्रमशः वर्मी कंपोस्ट और ग्रीन मिलबोर्ड निर्माण का काम शुरू किया गया। यहाँ उत्पादित वर्मी कंपोस्ट को वन विभाग, नर्सरी संचालक, स्थानीय किसान सहर्ष खरीदते हैं। पिछले पांच वर्षों में चकला इकाई से एनबीजेके द्वारा बड़े पैमाने पर जैविक खाद का उत्पादन हुआ है, जो लगातार बढ़ते क्रम में है। वर्ष 2019-20 में कुल 450 मीट्रिक टन जैविक खाद का उत्पादन हुआ। वर्ष 2020-21 में यह उत्पादन बढ़कर 750 मीट्रिक टन हो गया, जो पिछले वर्ष की तुलना में उल्लेखनीय वृद्धि दर्शाता है। लेकिन वर्ष 2021-22 में वर्मी कंपोस्ट का उत्पादन घटकर 430 मीट्रिक टन रह गया। कोविड महामारी के कारण उत्पादन और खपत में कमी आई, जिससे यह गिरावट देखी गई। वर्ष 2022-23 में उत्पादन फिर से बढ़कर 800 मीट्रिक टन हो गया, जिससे किसानों की हालत में सुधार और मांग में वृद्धि का संकेत मिला। पिछले वर्ष अर्थात 2023-24 में जैविक खाद का उत्पादन बढ़कर 825 मीट्रिक टन पहुंच गया, जो अब तक का सबसे अधिक उत्पादन रहा। ये आंकड़े बतलाते हैं कि जैविक खाद की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है।

एनबीजेके ने वर्मी कंपोस्ट उत्पादन और उपयोग को अपनी अन्य परियोजनाओं के मार्फत भी प्रोत्साहित किया है। वर्ष 2019–20 में कोडरमा जिला अंतर्गत 15 गाँवों में संस्था की ओर से क्रियान्वित "परिवर्तन" – समेकित ग्रामीण विकास परियोजना अंतर्गत

स्थानीय किसानों को वर्मी कंपोस्ट उत्पादन की 40 इकाईयां शुरू करने हेतु प्रोत्साहित किया गया। 2021–22 में रांची जिला के चान्हो प्रखंड के 15 परियोजना गाँवों में 123 किसानों को जैविक खाद निर्माण का प्रशिक्षण दिया गया। इन गाँवों में वर्मी कंपोस्ट और अजोला बायोफर्टिलाइजर की 15 उत्पादन इकाइयों की शुरुआत हुई, जो अगले वर्ष बढ़कर 30 हो गयी। अब 45 किसान जैविक खाद बनाते हैं और पशु चारा के तौर पर भी अजोला का उत्पादन करते हैं।

इसी प्रकार संस्था ने गाँवों में सिंचाई सुविधा की बहाली हेतु एक लंबे अरसे से काम किया है। पिछले पांच वर्षों की अवधि में एनबीजेके द्वारा निर्मित या नवीकृत जल संरचनाओं को इस प्रकार देख सकते हैं –

वर्ष 2019-20 में कोडरमा, दुमका और खूंटी जिलों में जल संरचना विकास कार्य किए गए। इस दौरान 18 कुओं और 13 तालाबों का नवीकरण, 1 तालाब का निर्माण तथा 76 कुओं का निर्माण किया गया, जिससे कुल 1106 एकड़ भूमि सिंचित हुई और 1091 लाभुकों को इसका सीधा लाभ मिला। वर्ष 2020-21 में दुमका के मसलिया और खूंटी के मुरहू, सदर प्रखंडों में जल संरचनाओं का विकास किया गया। इस दौरान 3 तालाबों और 2 कुओं का निर्माण किया गया, जिससे 106 एकड़ भूमि सिंचित हुई और 154 किसानों को लाभ प्राप्त हुआ। वर्ष 2021-22 में रांची के चान्हो और जमुई के चकाई प्रखंडों में जल संरक्षण कार्य किए गए, जिसके तहत 2 तालाबों का निर्माण तथा 1 तालाब और 1 कुएं का नवीकरण किया गया। इस प्रयास से 77 एकड़ भूमि सिंचित हुई और 70 लाभुकों को इसका फायदा मिला। वर्ष 2022-23 में देवघर सदर और चकाई में जल संरचनाओं का नवीकरण किया गया। इस दौरान कुल 10 तालाबों और 10 कुओं का नवीकरण किया गया, जिससे 300 एकड़ भूमि सिंचित हुई और 200 किसानों को लाभ मिला। इसी प्रकार वर्ष 2023-24 में चान्हो, देवघर सदर, चकाई, मुरहू, खूंटी सदर समेत गिरिडीह जिला के अलग-अलग प्रखंडों में जल संरक्षण कार्य किए गए। इस दौरान कुल 4 नये तालाबों के निर्माण हुए और 81 तालाबों के साथ 100 कुओं का जीर्णोद्धार किया गया। इस पहल से लगभग 4000 एकड़ भूमि सिंचित हुई और 2500 से अधिक किसानों को इसका सीधा लाभ मिला।

जल संरक्षण एवं सिंचाई संबंधी ऐसी परियोजनाएँ किसानों की आय में वृद्धि करने और जल संसाधनों को सतत रूप से विकसित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम साबित हुई हैं।

सिंचाई की बेहतर व्यवस्था से 43.91% परिवारों को लाभ हुआ है, और 80.81% परिवारों को बाजार से जोड़ा गया है। परियोजना ने महिलाओं के लिए स्व-सहायता समूहों और उद्यमिता को बढ़ावा दिया, जिससे ग्रामीणों की आय और आत्मनिर्भरता में सुधार हुआ।

इस पहल ने किसानों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए सूक्ष्म उद्यमिता को भी बढ़ावा दिया, जैसे पोल्ट्री, सुअर पालन, और मत्स्य पालन। परियोजना के अनूठे हस्तक्षेपों में सौर शीतगृह, बीज और कृषि-औषधि केंद्र, लाह हस्तशिल्प केंद्र और से मियालता की खेती शामिल हैं।

इस परियोजना ने "समुन्नति-द इकनॉमिक टाइम्स बेस्ट एफपीओ अवार्ड" और "विजयलक्ष्मी दास-फ्रेंड्स ऑफ विमेन एफपीओ 2021 अवार्ड" जैसे प्रतिष्ठित पुरस्कार भी जीते हैं। एनबीजेके के इस हस्तक्षेप से बाल तस्करी, पलायन और हिंसा की घटनाओं में कमी आयी है और इसने ग्रामीण क्षेत्रों में समृद्धि और स्थिरता लाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

इस प्रकार यदि हम समग्रता से देखें तो जैविक खेती संभव है और यह लाभप्रद भी है। लेकिन कृषि-सिंचाई हेतु जल संग्रहण संरचनाओं के साथ नवाचार भी जरूरी है। इसके अलावा हमें खेती की सहायक गतिविधियों पर भी ध्यान देना पड़ेगा ताकि लोगों की निर्भरता सिंचाई आश्रित कृषि से घटे। ■

जल से ही सुरक्षित है हमारा वर्तमान और भविष्य

- इन्द्रमणि साहू

गांव में एक कहावत है "उत्तम खेती मध्यम बान, निषिद चाकरी भीख निदान" यह कहावत अपने आप में एक दर्शन है। परन्तु, आज तथाकथित विकास और तरक्की के नाम पर इस दर्शन को तुच्छ समझा जाने लगा है। नौकरी की अहमियत ज्यादा हो गयी है और खेती को लोग घाटे का सौदा समझने लगे हैं। इसका एक कारण यह भी है कि लोग ज्यादा फसल लेने की चाह में फोस्फेट और रासायनिक खाद का ज्यादा इस्तेमाल कर रहे हैं जहाँ पूंजी लगती है। बाद में जब फसल या उत्पादन नहीं होता है या कम होता है तो लोग निराश हो जाते हैं। हालाँकि, यह बात दूसरी है कि गांव में अभी भी इसके साइड इफ्फेक्ट के बारे में जानकारी नहीं है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए कोडरमा के कुछ गांवों में संस्था समर्पण के द्वारा लोगों को जैविक खाद बनाने प्रकृति खेती करने की जानकारी दी जा रही है। आज कई घरों में इसे तैयार भी किया जा रहा है। हालाँकि, मनोदशा बदलने में देर लगती है। जहाँ बदली है वहां उस गांव में हरियाली एवं खुशहाली कायम है।

आज हम नौकरियों और बहु मंजिली इमारतों की तरफ जा रहे हैं। लिहाजा, बड़ी तेजी से प्रकृति और जल स्रोत ख़त्म हो रहे हैं। खेती-बाड़ी की फसलें जो कभी प्रकृति द्वारा तय थी, इन दिनों यह भी बदल गया है। झारखंड पठारी क्षेत्र होने के कारण यहाँ पानी का ठहराव नहीं है। लिहाजा, मौटे अनाज उगाने का रिवाज था। कोडरमा के लगभग सभी इलाकों में मड़ुवा की खेती होती थी। धान के बाद का यह दूसरी खरीफ फसल थी। धीरे-धीरे इस फसल के

प्रति लोगों का मोहभंग हो गया। हालाँकि, यह बात दूसरी है कि इस फसलके उपयोग नहीं करने से आज की पीढ़ी को बीमारियों का सामना करना पड़ रहा है। कहा जाता है कि इस फसल में रोगों से लड़ने की क्षमता है। इस क्षेत्र में एक बार फिर मड़ुवा की खेती करने के लिए संस्था समर्पण लोगों को न सिर्फ प्रोत्साहित कर रही है बल्कि, नए ढंग से खेती कर ज्यादा उपज बढ़ाने के तरीकों की जानकारी भी दी जा रही है। कुछ गांवों में 15-18 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक हुई। इससे किसानों में नई उर्जा का संचार हुआ।

माना जाता है कि मड़ुवा की खेती के लिए टांड जमीन सबसे ज्यादा उपयुक्त है और इस इलाके में ऐसी ही जमीन ज्यादा है। लोगों के पास रोपने-बोने और कटनी जैसे सभी विधि का ज्ञान है परन्तु, थोड़ी प्रोत्साहित करने की आवश्यकता पड़ी और सफलता मिल गयी। वहीं दूसरी ओर, मड़ुवा की न सिर्फ खेती बल्कि, इसके मूल्य संवर्धन के लिए मड़ुवा का आटा, लड्डू एवं अन्य विभिन्न तरह के उत्पाद बनाकर या प्रोसेस कर मार्किट में उपलब्ध कराने के लिए भी प्रोत्साहित किया जा रहा है। महिला समूह इस काम में लगी हुआ है। जयनगर के डंडाडीह का एक महिला समूह ने इस साल लगभग 2 लाख से ज्यादा की उत्पाद सामग्री बेचा है।

वहीं, यदि कोडरमा की माइका माइंस एरिया की बात करें तो यहाँ के अधिकांश गांवों में आज भी लोगों को शुद्ध पेयजल नसीब नहीं हो रहा है। आज भी लोग चुंवा का पानी पीने को विवश हैं। अभी गर्मी आ रही है। एक बार फिर लोग बूंद-बूंद को तरसेंगे। इन सभी परिस्थियों एवं फजीहतों को ध्यान में रखते हुए महुआटोली के ग्रामीणों अभी से ही इसके इन्तेजाम में जुड़ गये हैं।

पहले लगभग सभी गांवों में सामुदायिक व्यवस्था थी। पानी जरूरत के अनुसार इस्तेमाल होता था और संरक्षण भी। आज सरकारी व्यवस्था में पानी वितरण की चीज हो गई है। वैसे, नदियाँ हमारी आस्था का स्रोत है। धर्म, संस्कृति और सभ्यता का विकास नदियों की गोद में ही हुआ है। विज्ञान भी मानता है कि नदियों में पारिस्थिकी तंत्र का विकास होता है। सच कहें तो, पहले जमाने में लोग वहीं बसते थे जहाँ पानी और आसपास जंगल

होता था। जब हम छोटे थे तब नदियों में जितना पानी बहते देखा है वह इन दिनों बिलकुल नहीं दीखता है। इस चिंता ने ही हमें कुछ नया करने और लोगों को इसके लिए एकजुट करने को जागृत किया। फिर हम लोगों ने अपनी संस्था समर्पण के सहयोग से कई गांवों में प्राकृतिक बाँध, बोरा बांध, पत्थर बांध बनाकर पानी संचय किया। इससे न सिर्फ समुदाय को फायदा हुआ बल्कि प्रकृति व वनों और पहाड़ों के साथ सीधा रिश्ता भी कायम हुआ है।

हमारे पूर्वजों ने जल, जंगल और जमीन को हमेशा दिव्य दृष्टि से देखा है। इस परंपरा की फिलहाल अनदेखी हो रही है। मानो, कोई वस्तु हों। सच कहें तो पानी भी आज गुहार कर रहा है कि मुझे न सिर्फ उपयोग करो बल्कि संरक्षण भी करो। क्योंकि हमें बनाया नहीं जा सकता। विज्ञान ने अभी इतनी तरक्की नहीं की है कि हमें बना सके। वैसे विज्ञान अक्सर विकल्प देने में ज्यादा विश्वास करता है। जैसे पानी नदियों, तालाबों, डैमों से कम हुआ तो वह पाताल में जाने और वहां संयंत्र लगाने की बात करती है।

पानी आज न सिर्फ हर घर, हर गांव के लिए एक चुनौती सा है। यदि आज हम सब इस संकट को नहीं समझेंगे तो मान कर चलिए कि हम फिर कहीं भी जाएं, पानी हमारे साथ नहीं होगा। ऐसे में हमारा आर्थिक विकास और न जाने क्या-क्या विकास का होगा कहना मुश्किल है।

कुल मिलाकर, आजीविका संवर्धन की बात हो या फिर जीवन की बेहतरी की। यह प्रकृति के समीप से ही संभव है। पानी हमें हर हाल में चाहिए चाहे वह नदियों से आए, नालों से आये या फिर नलों से। और यह तभी आएगा जब जंगल बचेगा, प्रकृति सुरक्षित रहेगी। जबकि आज दोनों खतरे में हैं।

वैसे, पूरे झारखंड में खनिज संपदाओं का अम्बार है। परन्तु, यहाँ के लोग उतने ही गरीब हैं। वैसे कहावत है कि कोख में अमीरी और गोद में गरीबी है। कोडरमा की भी तस्वीर कुछ ऐसी ही है। यहाँ माइका है, ब्लू स्टोन है, पत्थर खदान है, बिजली उत्पादन का केंद्र है परन्तु, यहाँ के लोग उतने ही बदहाल और फटेहाल हैं।

यहाँ ज्यादातर लोग ढिबरा चुनने का कार्य या फिर दिहाड़ी मजदूरी करते हैं। परिवार के साथ-साथ छोटे-छोटे बच्चे भी शामिल होते हैं। लिहाजा, बच्चों का समुचित देखभाल नहीं हो पाता है। इस कारण भी यहाँ के ज्यादातर बच्चे कुपोषित हैं और किशोरियां एवं माताएं एनीमिया के शिकार। कहा जाता है कि एक कुपोषित एवं एनेमिक माँ कभी स्वस्थ्य बच्चे को जन्म नही दे सकती हैं। यही कारण है कि इस क्षेत्र में यह कुपोषण चक्र चलता ही आ रहा है। अब लोग अपने पोषण बगिया का इस्तेमाल कर रहे हैं और इस चक्र को तोड़ने का कार्य कर रहे हैं।

बंगाखलार पंचायत के एक गांव है कबराबूट। यहाँ कुल 26 परिवार हैं। सभी ढिबरा चुनकर गुजारा करते हैं। यहाँ के लोग पहले पीने व नहाने के लिए नाले का पानी इस्तेमाल करते थे। हमारी टीम ने जब समुदाय के साथ बैठक कर गांव के मुद्दों पर चर्चा शुरू की तो कुछ महीनों के बाद लोगों को इस बात की समझ आई कि हम लोगों को कुछ करना पड़ेगा। सभी ने पानी की महत्व को समझा और फिर गांव के बगल में बहने वाले नाले को बांधने का निर्णय लिया। फिर क्या, सभी ने चंदा जमा किया। 'समर्पण' के द्वारा भी चंदा स्वरुप कुछ सामग्री जैसे कुदाल, गेदा, टोकरी आदि दिया गया। चूँकि, जहाँ नाला बांधा जाना था वह जंगल की जमीन है। इस बात का तो डर तो था ही। सो ग्रामीणों ने जेसीबी से जल्दीबाजी में एक ही रात में नाले को बांध कर आहार बना दिया। पूरा ग्रामीण लग गए इसे ठीक करने में। फिर क्या देखते ही देखते आहार बनकर तैयार हो गया।

अभी वहां सालों भर पानी रहता है। और जहाँ पानी है वहां जीवन का अस्तित्व भी। अभी आस-पास का खाली परती जमींन हरा भरा हो गया और लोगों के चहरे पर ख़ुशी की लहर। लोग अब नहाने व खेती करने के साथ-साथ मछली भी पालते हैं। इसी तरह, ढोढाकोला, ढाब एवं बंगाखलार के गांवों खासकर असनातरी, लेंगरापरास, महुआटोली, सेवाटांड, वंदना, अम्बातरी आदि टोलों में बोरा बांध, तालाब, डोभा, कुआं निर्माण, कुआं मरम्मति जैसे कई कार्य हुए। जहाँ, आज पानी एकत्र हो रहा है एवं उसका इस्तेमाल नहाने और खेती में किया जाने लगा है। पानी का प्रबंध हो जाने से लोग ढिबरा के साथ खेती भी कर रहे हैं। इससे इनका आर्थिक स्थिति मजबूत हो रही है। थालियों में हमेशा 'तिरंगा भोजन' सजा देख मन प्रफुल्लित हो उठता है।

जब तक जल उपलब्ध है तभी हमारा वर्तमान एवं भविष्य सुरक्षित है। वैसे अपना देश हो या फिर अन्य कोई भी देश, सभी देशों की धरती से पानी ख़त्म हो रहा है। परन्तु, यहाँ के समुदाय और संस्था ने मिलकर जो हल निकाला वह अनोखा और सीखने योग्य है। ग्रामीणों ने जंगल से होकर बहने वाली नदी नालों को संरक्षित करने का प्रयास किया। लोग चुआं से पानी लेते थे। गर्मी में यह भी नसीब नहीं हो पाता था। पानी के लिए मीलों दूर जाना पड़ता था। महिलाएं परेशान हो जाती थीं। अब राहत है। यह सब श्रमदान से ही संभव हो सका। कहते हैं कि इतना पानी जमा करने के लिए सरकार को लाखों रूपये खर्च करना पड़ता।■

प्राकृतिक खेती : जैव विविधता की समृद्धि का प्रयोग

- कृष्ण कान्त

खेती और प्रकृति

खेती या एग्रीकल्चर मानव समाज की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। लगभग 10 हजार वर्ष ईसापूर्व पाषाणकाल के अन्त तक मानव आखेट और प्रकृति से भोजन जमा कर ही अपनी जीविका के लिये निर्भर थे। समय के साथ-साथ अपने अनुभव और बीज से पौध बनने की प्रक्रिया के सतत अवलोकन और उपयोगी जानवरों के पालने के साथ उत्तरोत्तर कृषि का विकास होता गया जो क्रमबद्ध तौर पर विकसित होकर कृषि विज्ञान के रूप में स्थापित हुआ। परन्तु इसके मूल में कृषि के प्रयोग प्रकृति के चक्र को समझते हुए सदियों के अनुभव से विकसित एक समृद्ध परम्परा रही है जो कि बाजारोन्मुखी सघन खेती के प्रभाव से अपना अस्तित्व खोती जा रही है।

विविधता को यदि हम समझना चाहते हैं तो हमें जंगल और नदियों की ओर जाना होगा जहाँ जंगल और जलतंत्र ने सहजीविता के आधार पर सदियों से विभिन्न प्रजातियों के लिये सहअस्तित्व और स्वतःस्फूर्त जैव व्यवस्था कायम की है जहां समुदाय और जैवतंत्र एका बनाकर रहते हैं। व्यवसायिक खेती में सिर्फ कुछ तरह की फसलें ही उपजाई जाती हैं। एक ही तरह की फसल होने के कारण इसकी देखभाल आसान होती है परन्तु फसलों का उत्पादन अस्थिर हो जाता है और फसल में बीमारियों और कीट प्रकोप भी देशज खेती की तुलना में अधिक होता है और भोजन में विविधता कम होती जाती है।

झारखंड जैसे राज्य में खेती सहजीवन और प्रकृति के सिद्धांतों पर आधारित रही

है। यहाँ की लोकोक्तियों में रोपा-डोभा, खेती-बारी जैसे शब्द खेती में प्रकृति के दर्शन और पानी, मिट्टी और जैव विविधता साधने के कौशल पर ही आधारित होकर स्थानीय समुदाय ने अपने देशज ज्ञान को समृद्ध किया है।

आज से सात दशक पूर्व तक आमजन अच्छा किसान उसे ही मानते थे जिसके यहाँ अनाज, दाल, सब्जी, तले, मसाले, मांस, मछली, दूध दही आदि का उत्पादन अपने घर में ही होता था और यही सम्पन्नता का मानक भी था। समय के साथ उत्पादन की होड़ और खेती में किसानी की खासियत विविधता से हटकर बम्पर फसल और उत्पादन की मात्रा की ओर सिमट गई है जिसका प्रतिकुल प्रभाव जलवायु संकट के गहराते दौर में साफ दिख रहा है।

हरित क्रांति के दौर में सघन कृषि के प्रयोग में बाहरी इनपुट जैसे रासायनिक खाद, उन्नत प्रभेद के बीज तथा कीटनाशकों के उपयोग को बढ़ावा दिया गया है जिससे तात्कालिक प्रभाव से उत्पादन तो बढ़ा है परन्तु समय के साथ रसायनों के कारण मिट्टी में मौजूद सूक्ष्म जीवों के समाप्त होने से मिट्टी की उर्वरता में कमी आई है, फसल में नई बीमारियों का प्रकोप बढा है।

अभिव्यक्ति फाउण्डेशन ने गिरिडीह और देवघर जिले में अपने काम के दौरान खेती की समस्या पर बातचीत करते हुए मूलतः किसानों की समस्याओं को समझते हुए मूलतः फसल विविधता, फसल व्यवस्थापन, समेकित खेती, खाद व्यवस्थापन, समेकित कीट प्रबंधन और जलवायु अनुकूल खेती को प्रोत्साहित करने का काम किया है।

फसल व्यवस्थापन

प्रयोग के अन्तर्गत फसल व्यवस्थापन मूलतः तीन सिद्धान्तों पर आश्रित है -

फसल चक्र को बेहतर बनाना - इसके अन्तर्गत मिश्रित फसलों का चयन किया जाता है जो मिट्टी से अलग मात्रा में पोषण लेती है और इनके संतुलन से मिट्टी में सालों

भर पौधों के किस के लिये पर्याप्त पोषण उपलब्ध करवाने की क्षमता बनी रहती है। मिट्टी को बांधने वाली दलहनी फसलें हवा और मिट्टी से मिलकर नाइट्रोजन उत्सर्जित करती हैं और साल में एक बार दलहनी फसल लगाने से मिट्टी को सजीव और उपजाऊ होती है। विभिन्न पौधों की जड़तंत्र अलग तरह की होती है जिसके अनुसार पौधों को जड़ समूह में बांटते हैं और फसल सघनता को बढ़ाने के लिये अंतर्वर्ती फसल के रूप में विभिन्न जड़ समूह की फसलों का चयन एक ही स्थान की मिट्टी से अलग अलग गहराई से पर्याप्त पोषण उपलब्ध करवाती है जिससे कुल उत्पादन में बेहतर प्रभाव दिखता है। रिले क्रापिंग का उपयोग किसान सदियों से करते आ रहे हैं जैसे धान के खेत में खेसारी या मसूर की खेती जिससे अतिरिक्त उत्पादन आता है। बहुमंजिली खेती और मचान विधि से एक ही जगह पर उसी पानी और खाद से एकाधिक फसलें आराम से ली जा सकती है।

समेकित खेती विधि

समेकित खेती विधि पारिस्थितिकी खेती के सिद्धान्तों पर आधारित है। इसके अन्तर्गत किसान के यहाँ घरेलू उत्पादन मोटे तौर पर छह स्रोतों - फसल, पेड़, मवेशी, जलतंत्र, पक्षी और खादतंत्र के माध्यम से आता है। समेकित खेती में किसान इन सभी उत्पादन तंत्रों मे इस प्रकार संतुलन विकसित करता है कि एक उपतंत्र का अपशिष्ट दूसरे उपतंत्र में निवेश के तौर पर उपयोग किया जा सकता है। इससे उत्पादन में विविधता बढ़ने के साथ साथ उत्पादन लागत में भी कमी आती है और खेती में आय की संभावना बढ़ती है। उदाहरण के तौर पर पशुपालक अपने यहाँ पशुपालन के साथ साथ चारे की व्यवस्था के लिये उपयुक्त पेड़ और फसलें लगाते हैं और अपशिष्ट पदार्थो का उपयोग खेती में खाद के तौर पर करते हैं। बत्तख-तालाब-मछली उपतंत्र में सहजीविता के आधार पर कम लागत में मछली, अण्डे, मांस के साथ फल सब्जियों का उत्पादन भी बढ़ाया जा सकता है।

आधुनिक खेती में रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक के बढ़ते प्रयोग से उत्पादन शुरुआती दौर में बढ़ती तो है परन्तु समय के साथ इसके उत्पादन में गिरावट आती जाती है और मिट्टी बंजर होती जाती है। समेकित खेती ऐसी स्थिति में उत्पादन को स्थिर करने के साथ सभी उपतंत्रों के माध्यम से किसानों को आत्मनिर्भर बनाती है जिससे भोजन में विविधता के साथ मौसम की अनिश्चितता से होने वाले जोखिम में भी कमी आती है और खेत के अन्दर ऊर्जा का रूपान्तरण एक तंत्र से दूसरे उत्पादन तंत्र में प्रभावी रूप से होता है।

खाद व्यवस्थापन

संस्था द्वारा घरेलू स्तर पर खाद व्यवस्थापन के लिये मुख्यतः आठ प्रकार के प्रयोग किये गये हैं जिनमें मुख्यतः कम्पोस्टिंग मटका खाद, नडेप खाद, हरित खाद, तरल खाद तथा गोबर गैस संयंत्र शामिल हैं।

कम्पोस्टिंग के संबंध में यह गलत मान्यता रही है कि यह विधि महंगी होती है और साधारण किसान इसका उपयोग नहीं कर सकते हैं। कम्पोस्टिंग के अंतर्गत पिट कम्पोस्ट या गड्ढा खाद, हीप कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, मचान कम्पोस्ट जैसे कम लागत के प्रयोग सफल रहे हैं। प्रायः अगहन के माह में खलिहान साफ करने के क्रम में किसान काफी मात्रा में जैव कचरा व्यर्थ ही नष्ट कर देते हैं। किसानों के साथ मिल कर पिट कम्पोस्ट विधि के अन्तर्गत इन सभी खलिहान के छिलके को एक गड्ढा बनाकर परत दर परत जैव कचरे के साथ गोबर तथा गोमूत्र के घोल का छिड़काव कर उपर तक उथला कर मिट्टी से लिपाई कर के उसमें बीच में हवा के प्रवाह के लिये एक बांस गाड़ दिया जाता है। इस विधि से किसान गरमा फसल के लिये अच्छी मात्रा मे खाद घर पर ही तैयार कर सकते हैं। गोमूत्र में पर्याप्त मात्रा में सूक्ष्मजीव मौजूद होते हैं जो कि गोबर के साथ मिलकर मिट्टी की उर्वरता बढ़ाते हैं और इनकी मात्रा और प्रभाव को बढ़ाने के लिय मालोसेस के लिये गुड़ या अत्यधिक पके गले मीठे फलों जैसे ताल, केला, पपीता, कटहल आदि के गूदे

का भी उपयोग कर गुणकारी तरल खाद बनाई जा सकती है।

की-होल गार्डन

की - होल गार्डन गृह वाटिका के अन्दर एक अभिनव प्रयोग है, जहाँ मिट्टी के अन्दर मल्च की परत से पानी को अतिरिक्त समय तक रोका जाता है और इसके बीच में बने गढ़े में जैव अपशिष्ट डालते हैं जिससे सिंचाई के पानी के साथ घुलकर यह मिट्टी के लिये उर्वरक का काम करते हैं। बहुमंजिली खेती का उपयोग कर इसमें लत वाली सब्जियों को भी चढ़ाया जा सकता है जो कम पानी वाली जगह में बहुत उपयोगी है।

कीट प्रबंधन : आधुनिक कीट प्रबंधन में रसायनों का बहुत ज्यादा उपयोग हो रहा है। इनमें मौजूद रसायनों में एन्डोक्राइन डिस्रप्टर्स होते हैं जो हमारे शरीर के अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को प्रभावित करते हैं और डायबिटिज, रक्तचाप, थायरायड आदि के खतरे बढ़ते हैं। प्रकृति में कीट नियंत्रण के लिये सहयोगी फसलें बहुत मदद करती है जो अपने रगं, गंध और कड़वे स्वाद के कारण इन कीटों को नियंत्रित करती है। ये फूल और पौधे अपने चटक रंग, तीखे गंध और स्वाद से कीट को अपनी ओर आकर्षित करती है या उन्हें खेत से दूर कर देते है। उपयुक्त फसल के कीट प्रबंधन में उपयोग के अलावे कड़वे पत्ते जैसे नीम, करंज, सिन्दवार, लहसुन, तम्बाकू आदि के क्वाथ से बने घोल जैसे नीमास्त्र, ब्रहम्पास्त्र, दशपर्णी के घोल का छिड़काव पौधों में कीट का नियंत्रण करते हैं साथ ही मिट्टी में फसल बोने के पहले नीम खल्ली का उपयोग, धूप दिखाने की विधि आदि से भी कीट नियंत्रित किये जाते हैं।

जलवायु अनुकूल खेती

जलवायु संकट जिस तरह से गहराता जा रहा है उसका सीधा प्रभाव हम खेती के कैलेंडर में देख सकते है। धान की खेती लगभग एक महीने आगे हो चुकी है। झारखंड राज्य गठन के उपरान्त 24 वर्षों में 10 साल सूखे से प्रभावित रहे हैं जहां छोटे किसानो ने अधिक उत्पादन के चक्कर में अधिक पानी वाली उन्नत फसलों को लगा कर गहरी मार खाई है। परम्परगत सूखारोधी किस्में लुप्त होती जा रही है। बीज संग्रह और संरक्षण की विधियों को किसानों के बीच प्रचारित करने की आवश्यकता है। साथ ही कम पानी वाली ऐसी फसलें पुनजीर्वित करने के प्रयास चलाये जायें जिससे स्थिर उत्पादन के साथ किसान मौसम की मार से बच सकें। इसके साथ ही सिंचाई के तौर तरीकों में भी सुधार की आावश्यकता है और मल्चिंग यानि भूमि आच्छादन से भी मिट्टी की नमी को बनाया जा सकता है। बाहर के बीजों के साथ नई बीमारियों के प्रकोप भी बढ़े हैं जिसके कारण किसानों को अपने परम्परागत बीजों के संरक्षण संवर्धन की जरूरत और भी अधिक होती जा रही है जो कि समय के साथ परखे और भरोसेमन्द है और स्थानीय पारिस्थितिकी का हिस्सा हैं।

मानव स्वभाव से प्रयोगधर्मी रहा है और इस हठ में प्रकृति से छेड़छाड़ के कई दुष्परिणाम समय-समय पर देखने को मिलते रहते हैं। खेती प्रकृति से उपजी व्यवस्था है और यह उत्पादन से इतर सभी वनस्पति और जीव प्रजातियों के बीच स्थायी संतुलन करती है जोकि प्राकृतिक और स्थायी खेती के मूल में है और इसको अपनाकर ही एक समृद्ध गाँव और समाज की कल्पना की जा सकती है। ■

प्रवासी मजदूर से एक आत्मनिर्भर किसान बनने तक का सफ़र

संदर्भ : फतेहपुर ब्लॉक में संवाद एवं एसबीआई फाउण्डेशन का साझा प्रयास

- मुकेश/सीमांत

'संवाद' एवं 'एसबीआई' द्वारा जामताड़ा जिले के फतेहपुर ब्लॉक के 17 गांवों में आजीविका के लिए कई महत्वपूर्ण प्रयास किये गए हैं। इनमें सिंचाई के लिए तालाबों के जरिये सालों भर पानी उपलब्ध कराना, जैविक खेती के तरीकों को बढ़ावा देना, ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाना, कम लागत में ग्रामीणों को डिजिटल पहुंच प्रदान करना इत्यादि प्रमुख हैं।

इस क्रम में वर्ष 2024 में यहां 'संवाद' 'एसबीआई फाउण्डेशन' के सहयोग से 'एसबीआई ग्राम सक्षम' नामक सीएसआर कार्यक्रम संचालित किया। इसके तहत यहाँ 20 तालाबों का निर्माण एवं जीर्णोद्धार किया गया। इन तालाबों में से कुछ परित्यक्त और सूखे हो चुके तालाबों का जीर्णोद्धार किया गया।

देखा जाए तो एक लंबे समय से यहाँ सीमित सिंचाई सुविधा का घोर अभाव रहा है। यहाँ के किसान खेती कार्य के लिए पहले पूरे साल वर्षा पर निर्भर रहते थे। लेकिन तालाबों के निर्माण एवं जीर्णोद्धार से यहाँ के किसानों के पास अब एक विश्वसनीय जल स्रोत है जिसमें सालों भर पानी रहने की संभावना है। सालों भर पानी की उपलब्धता जहाँ एक ओर तालाबों की उपस्थति मिट्टी की नमी के स्तर को बढ़ाता है, भू-क्षरण व मरुस्थलीकरण को रोकता है, वहीं दूसरी ओर तालाबों के जरिये मछली पालन के काम से ग्रामीणों को आत्मनिर्भर भी बनाता है। यहाँ के किसान अब सालों भर खेती करते हैं। इस बार सब्जियां व अन्य पैदावार सरप्लस हुई हैं, खासकर टमाटर की हुई। बम्पर पैदावार ने ग्रामीणों को टैमटो सास बनाने के बारे में सोचने के लिए प्रत्साहित कर दिया है।

स्थानीय निवासी बहरूद्दीन मियां एवं बाबूराम की आत्म जुबानी के जरिये एक 'प्रवासी मजदूर से एक आत्मनिर्भर किसान बनने तक के सफ़र' से समझा जा सकता है।

बाबूराम, पवारिया-ग्राम प्रधान, पारा वृंदावानी, ग्राम पंचायत: बनुडीह, ब्लॉक फतेहपुर, जिला-जामताड़ा के निवासी हैं।

परियोजना से पहले तालाब की लगभग सभी मछलियां मर चुकी थीं। इतना ही नहीं तालाब का पानी इतना प्रदूषित हो चुका था कि छोटे जीव भी जीवित नहीं रह सकते थे। नवीनीकरण के बाद, हमने तत्काल सुधार देखा। मछली की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। साफ पानी ने मेंढक और कीड़े को भी वापस लाया। इससे न केवल पारिस्थितिकी तंत्र में सुधार हुआ है बल्कि आजीविका में भी सुधार हुआ है।

एक ग्राम प्रधान के रूप में बाबूराम इस नवीकरण प्रक्रिया के कई महत्वपूर्ण बदलाव देखते हैं। तालाब का नवीनीकरण यहाँ के वन्यजीव जानवरों को पूरे वर्ष आसानी से पानी प्राप्त करने में मदद करता है। साथ ही जंगल के पास स्थित होने के कारण जानवर आसानी से पहुंच सकते हैं। यहाँ अक्सर देखा गया है कि सूखे की स्थिति के दौरान अधिकांश जलीय जीव, पक्षी और अन्य वन्यजीव विलुप्त हो जाते हैं लेकिन इस वर्ष अब तक ये सभी देखे गए हैं। उम्मीद है कि आने वाले समय में और अधिक जलीय पौधे, मछली, पक्षी और अन्य वन्यजीव वापस आ जाएंगे, जिससे स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र मजबूत होगी।

इस क्रम में कम लागत में ग्रामीणों को डिजिटल पहुंच प्रदान करना ग्राम सक्षम परियोजना की एक अन्य उपलब्धि है जिसका यहाँ जिक्र जरुरी होगा। इसके पहले डिजिटल सेवाओं की कमी के कारण बनुडीह और आसनबेरिया के लोगों को सरकारी योजनाओं को ठीक से प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। उन्हें अक्सर ज़ेरॉक्स, प्रिंटआउट और अन्य ऑनलाइन सेवाओं के लिए कई किलोमीटर पैदल चलना पड़ता है। उन्हें किसी भी प्रकार का डिजिटल सुविधाएँ प्राप्त करने के लिए बड़ी राशि का भुगतान करना पड़ता है। इस अंतर को पाटने के लिए 'एसबीआई फाउंडेशन' और 'संवाद' ने संयुक्त रूप से 'एसबीआई ग्राम सक्षम' पहल के तहत एक ग्राम सेवा केंद्र की स्थापना की। ग्राम सेवा केंद्र में दोनों पंचायतों के लोग रियायती दर पर डिजिटल सेवाओं का उपयोग करते हैं। इससे बानुडीह और आसनबेरिया के किसानों को भी अलग-अलग कृषि आधारित चैनल देखकर ग्राम सेवा केंद्र के माध्यम से लाभ हुआ। और वे कृषि से संबंधित अपने संदेह को दूर करते हैं। उन्हें ग्राम सेवा केंद्र के माध्यम से विभिन्न सरकारी योजनाओं से संबंधित जानकारी भी मिलती है। यह एक साझा अभ्यास है 'संवाद' और 'एस.बी.आई.' का! खेती, किसानी और पानी बचाने का यह अभिक्रम अनुकरणीय है। ■

नैसर्गिक खेती : जलवायु संकट का एक समाधान

- घनश्याम

खेती एक संस्कृति है तथा आजीविका की एक समुचित पद्धति भी। यह पद्धति समग्र जीवन दर्शन जुड़ी है। और यह दर्शन प्रकृति, प्राणी और मानव के उद्विकास से जुड़ा है। इसलिए खेती महज मुनाफा कमाने का धंधा नहीं है। जीवन को समृद्ध और स्वस्थ्य बनाए रखने का उपक्रम है।

कथित आधुनिक खेती को धंधा बनाने और उसके आधार पर न्यू- कार्पोरेट कल्चर को बुलंदी तक पहुंचाने की सुनियोजित कोशिशें हो रही हैं। अगर गौर से देखें तो दुनिया में तीन तरह की विचारधारा चल रही है। पहला है आधुनिक विज्ञान और तकनीक का सहारा लेकर कृत्रिम बौद्धिकता के माध्यम से खेती का रोबोटाईजेशन कर मानव को खेती से बेदखल करना तथा दूसरी धारा है खेती को अधिक से अधिक प्राकृतिक बनाते हुए मानव संस्कृति से जोड़े रखना।

लेकिन एक तीसरी धारा भी है – आदिवासियत की !

इसलिए द्वंद्व के इस दौर में यह जरूरी है कि एग्रो इकोलॉजी की पद्धति को तेजी से अंगीकार किया जाए और जहरीली और बाजार परस्त खेती को अलविदा कहा जाए। इस तरह के अभियान और अभिक्रम पूरी दुनिया में चल रहे हैं। इटली जैसे उन्नत देश के परिवर्तनकारी जमातों ने एक दिलचस्प अभियान शुरू किया है जिसे वहां की भाषा में "टेरा माड्रे" कहा जता है। इसके तहत आज के पोपुलर फूड "फास्ट फूड" के मुकाबले "स्लो फूड" अभियान कहा गया है। यह अभियान बड़ी तेजी से

दुनियाभर में पोपुलर हो रहा है। इसमें वैसे भोज्य पदार्थ और सामग्री इस्तेमाल किये जाते हैं, जो प्रकृति से सीधे प्राप्त होते हैं और जिसको खाने लायक बनाने में कम ऊर्जा का इस्तेमाल किया जाता है या किया जाना संभव है। वैसे इस पद्धति में पहली प्राथमिकता यह है कि वैसे भोज्य पदार्थ जो बिना पकाये खाया जा सकता उसे बिना पकाये खाने की चलन विकसित की जाए। इससे उसमें अंतर्निहित पौष्टिकता बरकरार रहे और रस और स्वाद भी कायम रहे एवं जलवायु पर भी अतिरिक्त दबाव न पड़े।

हमें लगता है कि एग्रो इकोलॉजी की उत्पादन, संग्रहण और उपयोग की समग्र पद्धति में "स्लो फूड आंदोलन" के दर्शन, उद्देश्य और क्रियान्वयन की प्रक्रिया को भी शामिल किया जाना चाहिए। क्योंकि फूड हैबिट बदले बिना उत्पादन तथा संग्रहण की पद्धति को सतत आगे बढ़ना संभव नहीं है।

जापान के कालजयी कृषि वैज्ञानिक फुकुओका ने प्राकृतिक खेती की पद्दति के दर्शन और प्रक्रियागत ढांचों को विकसित करते हुए यह बात साफ तौर पर कही थी कि भूमि पर जुताई से मिट्टी में ऑक्सीजन का प्रवाह बढ़ता है, जिससे प्राकृतिक विघटन की प्रक्रिया में असंतुलन पैदा होता है। प्राकृतिक खेती में सूर्य की रोशनी, जल और मिट्टी के संसाधनों का इस्तेमाल होता है। परिणामत: मिट्टी में मौजूद लघुजीवों का बेहतर तरीके से सदुपयोग होता है।

फुकुआको आगे कहते हैं कि प्रकृति में जैविक पद्धति से विकसित केंचुए मिट्टी को 7 मीटर तक खोद सकते हैं और मल से मिट्टी का सृजन और निर्माण करते हैं। जितना आज का कोई भी कृषि संयंत्र नहीं कर सकता। *(जानने के लिए उनकी किताब "तिनकों से आई क्रांति" अवश्य पढ़ें।)*

मानव जीवन के उत्क्रमित विकास के दौर में महिलाओं ने अपने प्रसव काल के दौरान प्रकृति की संरचना और प्रकृति प्रदत्त पदार्थों की सृजनात्मक पद्दति को समझते हुए घासों के बीज को सहेजकर

और मिट्टी में गोड़कर धान, गेंहू और साक-पात जैसे दर्जनों खाद्य पदार्थो के सृजन और उत्पादन की पद्धति विकसित की। इसीलिए खेती-किसानी प्राकृतिक अवस्था से अविराम यात्रा करते हुए मानव संस्कृति में समाहित हुई। यहां हमें यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि एग्रो इकोलॉजी के समग्र विकास में महिलाओं की भूमिका नेतृत्वकारी की होगी।

आज के कथित विकास के दौर में सबसे बदतर स्थिति कामकाजी महिलाओं की होती जा रही है। इस विकास ने जहां एक तरफ प्रकृति को विनष्ट करते हुए खेती-किसानी को तहस-नहस कर दिया है वहीं दूसरी तरफ उन्नत खेती के नाम पर ज्यादा से ज्यादा अन्न उपजाने के नाम पर खेती को कार्पोरेट के हवाले कर भोज्य पदार्थ को जहरीला बना दिया है तथा खेती की विविधता और विभिन्नता को जमींदोज कर दिया। परिणामत: बेरोजगारी, पलायन, विस्थापन और गंभीर बीमारियों का चौतरफा हमला किसानों पर हो रहा है। इसके कारण खेती-किसानी महंगी होती जा रही है। और लोग खेती किसानी को छोड़कर बड़े शहरों की ओर लोग बहुतायत में पलायन करने लगे हैं। इन दिनों इस पलायन में महिलाओं की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। झारखंड के कुछ ऐसे जिले हैं जहां की युवतियों के बल पर दिल्ली जैसे महानगरों का घरेलू कामकाज आगे बढ़ता है। एक अनुमान के अनुसार सिर्फ दिल्ली में चार लाख से ज्यादा झारखंडी महिलाएं घरेलू-कामगार के रूप में काम कर रही हैं। जबकि झारखंड जैसे जंगल और जैवविविधा से संपन्न राज्य में एग्रो इकोलॉजी की असीम संभावना है। वास्तव में जंगल, जैवविविधता और खेती-किसानी के समेकित और समुचित सम्मिश्रण का नाम ही एग्रो इकोलॉजी है। लेकिन ऐसा तभी संभव है जब राजनीतिक नेतृत्व दृष्टि-संपन्न तथा दृढ़ इच्छाशक्ति वाला हो।

यह बात अब सभी वर्ग के लोग स्वीकार करने लगे हैं कि जलवायु संकट न सिर्फ किसी एक देश के लिए बल्कि पूरी दुनिया के लिए खतरा बनकर सामने आया है जिसने ग्लोबल वार्मिंग (भूमंडलीय तपन) को काफी बढ़ा दिया है। परिणामत: जहां वातावरण में ऑक्सीजन की कमी होती जा रही है, वहीं कार्बन की मात्रा में बेतहाश वृद्धि हो रही है। इस साल की गर्मी ने यह संकेत तो दे ही दिया है कि समय रहते इंसान ने अपने कथित विकास की दिशा नहीं बदली तो एक समय ऐसा आयेगा कि एयर कंडिशनर भी अपना सामर्थ्य खो देगा। इससे कई तरह के वायरस पैदा होंगे, जो इंसान की बौद्धिक एवं चित्सकीय पहुंच से बाहर होंगे– ठीक कोविड–19 की तरह !

इसलिए एक पंथ दो काज के विचारों को आत्मसात करते हुए एग्रो इकोलॉजी की तरफ ठोस और अर्थपूर्ण कदम बढ़ाने का समय आ गया है। इस प्रक्रिया का अनुगमन करते हुए जहां एक तरफ बेरोजगारी, पलायन और गंभीर बीमारी का सामना किया जा सकता है वहीं दूसरी तरफ जलवायु संकट और ग्लोबल वार्मिंग जैसे वैश्विक संकट पर सनै सनै विजय पाया जा सकता है। लेकिन यहां धैर्य पूर्वक यह कदम भी उठाना ही पड़ेगा कि एग्रो इकोलॉजी की पहल का नेतृत्व महिलाओं के हाथों सौंपा जाए।

आइए, इस दृष्टि और दिशा को आगे बढाते हुए हमसब एग्रो ईकोलॉजी के विचार और प्रक्रिया को आगे बढ़ाएं। तमाम तरह की निर्णायक मंडलों में महिलाओं को सक्रिय और बराबरी का हिस्सा मुहैया कराया जाए। क्योंकि महिलाओं ने यह साबित कर दिखाया कि अगर उसे अवसर और स्थान मिले तो बुनियादी बदलाव की नींव वे सब डाल सकती हैं। ऐसी इक्कीसवीं की यह मांग भी है और जरूरत भी। क्योंकि इतिहास हमें बतलाता है कि खेती-किसानी की नींव महिलाओं ने ही डाली थी। और जब तक यह महिलाओं के नेतृत्व और नियंत्रण में था तबतक खेती किसानी इकोलॉजिकल ही थी तथा सांस्कृतिक और संस्कारयुक्त भी। तब इसके केंद्र में थी सामुदायिक उत्सवधर्मिता। आज भी आदिवासी इलाके में ऐसा देखा जाता है। भारतीय परिदृश्य के वार्षिक अनुक्रम और आवृति में आज भी इसकी झलक मिलती है।

एग्रो-इकोलॉजी को आगे बढ़ाने का मतलब है समेकित खेती को बढ़ावा देना। समेकित खेती का दर्शन, सिद्धांत और प्रक्रिया पूरी तरह से प्रकृति केंद्रित है। यह सामूहिकता और सामुदायिकता निर्भर है। यानी परिवार और गांव तथा गांवों के क्लस्टर की एकता और साहचर्य पर अवलंबित है। इसलिए इस अवधारणा को प्रक्रियागत आकार देने के लिए सबसे पहला टास्क होगा– गांव की एकता को मजबूत करना। जो आज के समय में ग्राम सभा और ग्राम-स्वशासन की मजबूती पर निर्भर है। गांव ज्यों ज्यों सशक्त होता जायेगा स्वशासन उतना ही क्रियाशील बनेगा। इसका अर्थ यह है कि महिलाओं की भूमिका भी नेतृत्वकारी होगी। महिलाओं की भूमिका जितनी नेतृत्वकारी होगी परिवार और गांव उतना ही सबल बनेगा एवं भविष्य की राजनीति भी उतनी ही पारदर्शी और लोकतंत्रात्मक होगी। यानी एग्रो इकोलॉजी एक समेकित और बहु आयामी जीवन-जीविका पद्धति है। ■

किसान मेला : जैविक खेती को प्रोत्साहित करने की पहल

मेड़िया में किसान मेला : जहाँ उभरता है आदिवासियत का स्वर

पूर्वी सिंहभूम के मेडिया गांव में 5 फरवरी 2025 को किसान मेला का उद्घाटन मेडिया ग्राम मांझी बाबा नायक, पुस्तकालय संस्थापक दुखीराम हेंब्रम, पूनम सोरेन ने सामूहिक रूप से दीप जलाकर किया। मांझी बाबा प्रश्नजीत हांसदा में उत्पादित फसल प्रदर्शनी का फीता काटकर उद्घाटन किया। मुसाबनी प्रखंड के मीडिया पंचायत के मीडिया स्कूल मैदान में 'संवाद' झारखंड 'बिदू चांदान पुस्तकालय' और 'महिला ग्राम संगठन' के संयुक्त तत्वाधान

में 17 वां किसान मेला में दर्जनों गांव से ग्रामीण शामिल हुए। मेला में कुल 89 किसानों ने अपने फसल उत्पादन की प्रदर्शनी लगाई। मेला की विशेषता यह रही कि इसमें ज्यादातर महिला किसानों ने भाग लिया। मेडिया के किसान प्रिया मुर्मू की पीली गोभी और कोलाबडिया की महिला किसान लक्ष्मी सोरेन द्वारा उत्पादित गुलाबी गोभी आकर्षण का केंद्र रही। विष्णु प्रिया महिला समूह की युवती और महिलाओं द्वारा लकड़ी के आकर्षक हस्तकला प्रदर्शनी उपस्थिति लोगों को लुभाती रही। मेले में बच्चों का खेलकूद, सामान्य ज्ञान, पारंपरिक हुनर को बचाएं रखने के लिए बोंगा फुड़ू (पूजा का पत्तल दोना) बनाना। महिलाओं ने दिसोम डा डान जैसे खेलों में भाग लेकर मेला का आनंद उठाया। ■

लालपुर में भव्य किसान मेला : जैविक खेती की प्रदर्शनी

देवघर जिला के मधुपुर प्रखंड अंतर्गत जभागुड़ी पंचायत के लालपुर गांव में 14-15 फरवरी को दो दिवसीय भव्य किसान मेला का उद्घाटन मुख्य अतिथि सूबे के अल्पसंख्यक कल्याण, जल संसाधन विभाग के मंत्री हफीजुल हसन, विशिष्ठ अतिथि गांधीवादी कुमार कलानंद मणि, समाजकर्मी घनश्याम भाई, एक्शन एड के सौरव, जिप सदस्य सोनी सोरेन, शीला देवी, ऐनी टुडू, खगिया देवी, सागोरी हेम्ब्रम, इंद्रदेव मंडल, पंकज पियुष, कुंदन कुमार भगत, आदि ने संयुक्त रूप से दीप जलाकर और नगाड़ा बजाकर किया। इसके पूर्व जभागुड़ी समेत अन्य अखड़ा टीम व ग्रामीणों द्वारा मंत्री का भव्य रूप से स्वागत किया गया। कार्यक्रम का संचालन अबरार ताबिन्दा, अन्ना सोरेन, आनंद मरांडी ने किया व धन्यवाद ज्ञापन ऐनी टुडू ने किया।

विषय प्रवेश कराते हुए समाजकर्मी

घनश्याम ने कहा कि लालपुर 56 परिवारों का गांव है। यह एक ऐसा गांव था जहां की अधिकांश भूमि पथरीली और वीरान थी। स्थिति ऐसी थी कि मुश्किल से एक शाम का भोजन यहां के लोग जुटा पाते थे। लेकिन आज यहां के किसान खुशहाली के रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं। गांव के नौजवान, महिला, किसान संगठित हुए। सामूहिक श्रम व न्यूनतम संसाधन से उन्होंने गांव की तस्वीर और तकदीर बदलने का काम किया। जो पानी बहकर बेकार चला जाता था, ग्रामीणों के अभिक्रम से जोरिया में चेक डैम बनाकर लिफ्ट ऐरिगेशन का निर्माण कराया गया। इससे पथरीली व वीरान पड़ी भूमि पर हरियाली आ गई। पहले किसान सिर्फ धान की फसल उगाते थे, लेकिन अब धान के अलावे तीन अन्य फसल उगाते हैं। सब्जी की वृहत खेती होती है। लालपुर स्वशासन और स्वावलंबन की दिशा में आगे बढ़ रहा है। माननीय मंत्री जनाब हाफिजुल हसन ने कहा कि हमने लालपुर के किसानों से बहुत कुछ सीखा है। इस गांव ने अपनी एक अलग पहचान बनायी है। अखड़ा टीमों ने पारंपरिक तरीके से सांस्कृतिक कार्यक्रम को प्रस्तुत किया। लालपुर किसान मेला के अवसर पर खेती किसानी उपज, हस्त कला, बांस कला, चित्रकला, पुस्तक प्रदर्शनी लगाई गई। किसान मेला में 15 फरवरी को समेकित खेती दशा और दिशा विषयक किसान गोष्ठी का आयोजन किया गया। किसान गोष्ठी में राज्य के विभिन्न जिले से आए किसान प्रतिभागी शामिल हुए। ■